वैश्विक संवाद GLOBAL DIALOGUE

2.3

सूचना पत्र

अंक 2 / क्रमांक 3 / फरवरी 2012

GDN

International Sociological Association

तहरीर पर 'नजर'
सामिया महरेज

ब्यूनोस आयर्स में आई.एस.ए. का फोरम
अलबर्टो बियालाकोक्स्की
एलिशिया पालेरमो

पोलिश अप्रवासी
ईवा पालेन्जा–मॉलेन्बेक

परिचर्चा जारी है
जैफ्री सी. अलेक्जैण्डर
पावलो हेन्रिक मार्टिन्स्

> उत्तर–सोवियत समाजशास्त्र की शोचनीय स्थिति
> न्यूजीलैण्ड में माओरी समाजशास्त्र
> उत्तर–सोवियत अर्मेनिया में गरीबी
> करण्ट सोशियोलॉजी का इतिहास
> हमारे जापानी सम्पादक
> वैश्विक कक्षा
> आई.एस.ए. में चुनावी पूर्वाग्रह
> जॉन रेक्स और कुर्ट जोनासोह्न की स्मृति में
> दुनियां भर के देशों में समाजशास्त्र : कोलम्बिया, टर्किक देश, भारत एवं ब्रिक के देश

> सम्पादकीय

सामाजिक न्याय एवं प्रजातान्त्रीकरण

''सामाजिक न्याय एवं प्रजातान्त्रिकरण'' के विषय पर होने वाले आई.एस.ए. के फोरम के लिए ब्यूनोस आयर्स विशेषतौर पर उपयुक्त मंच है। जैसा कि स्थानीय आयोजन समिति के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष, अलबर्टो बियालाकोक्स्की एवं एलिशिया पालेरमो तथा ए.एल.ए.एस. (लैटिन अमेरिकन समाजशास्त्रीय परिषद) के अध्यक्ष, हेन्रिक मार्टिन्स ने वैश्विक संवाद के इस अंक में लिखा है लैटिन अमेरिका में न केवल सामजिक न्याय एवं प्रजातान्त्रिकरण पर उन्नतिशील आन्दोलन किये गये बल्कि यहां के समाजशास्त्रियों ने इन आन्दोलनों में अपनी भूमिका विजेताओं की जैसी रखी। ऐसा करने में उन्होनें गतिशील और विशिष्ठ क्षेत्रीय समाजशास्त्र की रचना की जो कि फोरम में प्रदर्शित की जाएगी।

''सामजिक न्याय एवं प्रजातान्त्रिकरण'' न केवल स्थान के लिहाज से उचित है बल्कि इस ऐतिहासिक क्षण के लिए भी। सामिया महरेज वैश्विक संवाद के इस अंक को मिश्र की ''जनवरी क्रान्ति'' के प्रतिबिम्बों के साथ प्रारम्भ करती हैं – इसके विविध अर्थों पर विचार करते हुए जो कि मिश्र के अन्दर तथा अन्य देशों में प्रसारित हुए हैं। काहिरा के तहरीर ने वास्तव में एक साल के लम्बे सामाजिक आन्दोलनों की वैश्विक लहर को सामाजिक न्याय और लोकतन्त्र को कायम रखते हुए प्रेरित किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि आन्दोलनों ने बेधड़क टयूनिशिया, मिश्र, लीबिया, सीरिया, यमन की तानाशाहीयों पर हमला किया है और राजकोषीय कठोरता के विरुद्ध सुलगते हुए यूरोपियन आन्दोलनो को भी तथा ''वॉल स्ट्रीट पर कब्जा करो'' (Occupy Wall Street) के यू.एस. तक के फैलाव को गरजते हुए सारे विश्व को वापस कर दिया है। हमें इजराइल में हुए भारी विरोध को भी नहीं भूलना चाहिये और ना हीं चिलि तथा सबसे हाल ही में रुस में। शिकायतें राष्ट्रीय हो सकती हैं, लेकिन आन्दोलन वैश्विक हैं।

शोषितों द्वारा अभी तक अधिक आन्दोलन नहीं किये गये हैं, हालॉकि वे उनमें सम्मिलित हो गये हैं, लेकिन बेदखल किये हुए लोगों के – जिनका अस्तित्व अनिश्चितता के द्वारा परिभाषित किया गया है। वे विद्यार्थियों या पूर्व–विद्यार्थियों के आन्दोलन हैं अथवा अधिक विस्तृत तरीके से युवाओं के, जिनको उनके भविष्य तथा उनकी योग्यताओं और ज्ञान के उपयोग के अवसरों से बेदखल कर दिया गया है। इनमें उन किसानों के आन्दोलन भी सम्मिलित हैं जिन्हें उनकी जमीन और पानी से बेदखल कर दिया गया है जैसा कि चीन, भारत, फिलीपीन्स, ब्राजील, बोलीविया एवं अन्य स्थानों पर हुआ है। कब्जाकरो आन्दोलन (Occupy Movements) शहरी प्रांगणों के विरुद्ध भी उठ खडे हुए हैं जिनमें कि उन्हें सार्वजनिक स्थानों पर डटे रहनें के लिए पुलिस से लडना पडता है।

जबकि ''कब्जा करो आन्दोलन'' पूजीवाद के विरुद्ध एक प्रतीकात्मक चुनौती खडी करते हैं, वे समाजशास्त्र के सम्मुख भी एक वास्तविक चुनौती प्रस्तुत करते है। असमानता के अध्ययन अब अपने आप को 99 प्रतिशत तक सीमित नहीं कर सकते बल्कि उन्हे एक प्रतिशत पर भी करीब से ध्यान देना होगा। हम अपने आप को केवल आमदनी तक सीमित नहीं कर सकते बल्कि सम्पदा का भी अध्ययन करना होगा और यह भी देखना होगा कि किस प्रकार 1 प्रतिशत 99 प्रतिशत का शोषण करते हैं, उदाहरण के लिए ऋण ताबेदारी/दासता के विभिन्न रुपों के माध्यम से। राजनैतिक समाजशास्त्र को अपना ध्यान चुनावी प्रजातन्त्र पर केन्द्रित करने से परे जाना होगा क्योंकि यह सामाजिक अन्याय का विरोध करने में अयोग्य साबित हुआ है तथा वित्त पूंजी के नियमन करने में भी असफल रहा है। कब्जाकरो आन्दोलनों ने अपने आप को प्रजातान्त्रिक भागीदारी के माध्यम से परिभाषित किया है। यहां पर भी लैटिन अमेरिका अग्रणी रहा है। संरचनात्मक समायोजन नीतियां जिन्होने कि 1990 के दशक में अर्थव्यवस्थाओं को नष्ट कर दिया था ने न केवल अर्जेन्टीना में कारखानों तथा सार्वजनिक स्थानों पर कब्जों को बल्कि प्रति–आन्दोलनों के एक दशक की ओर भी अग्रसर किया। यह भी एक वजह है कि हमें 1 से 4 अगस्त 2012 में ब्यूनोस आयर्स में होना चाहिये।

वैश्विक संवाद का एक वर्ष में 5 बार 13 भाषाओं में प्रकाशन होता है। इसे आप फेसबुक पर ढूंढ सकते हैं तथा आई.एस.ए. वैबसाइट पर भी। आप अपने लेख माईकल बुरावे को इस पते पर भेज सकते हैं: Michael Burawoy <burawoy@berkeley.edu>

''तहरीर'' पर नजर। *25 जनवरी की मिश्र की ''क्रान्ति'' ने सामाजिक प्रतिरोध के एक नये युग को संकेतिक किया। इसकी वार्षिक जयन्ती सामिया मेहरेज के लिए इसके विविध मायनों को भिन्न लोगों के मध्य–मिश्र में भी तथा इसके परे, सोचने का एक अवसर है।*

ब्यूनोस आयर्स में आई.एस.ए. फोरम की चुनौतियां। *स्थानीय आयोजक: अलबर्टो बियालाकोक्स्की एवं एलिशिया पालेरमो, ब्यूनोस आयर्स में सामाजिक न्याय एवं प्रजातान्त्रीकरण पर वैश्विक संवाद के बारे में अपनी योजना हमें बता रहे हैं।*

पोलिश अप्रवासी। *सोवियत संघ एवं इसके साम्राज्य के विघटन के कारण पूर्वी एवं मध्य यूरोप में अप्रवासियों की बडी संख्या पहुंची जो कि इस क्षेत्र के असंतुलित विकास को प्रदर्शित करती है। ईवा पालेन्जा–मॉलेन्बेक जर्मनी में पोलिश अप्रवासियों पर एक मर्मस्पर्शी विश्लेषण प्रस्तुत कर रही हैं।*

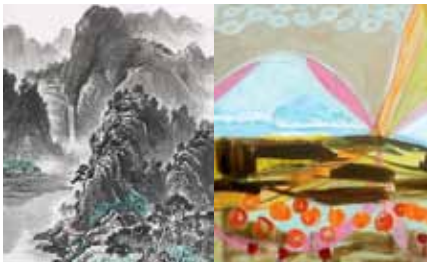

स्थानीय महानगरीयतावाद। *अंर्तराष्ट्रीय समाजशास्त्र पर परिचर्चा को जारी रखते हुए जेफ्रे अलेक्जेन्डर दर्शाते हैं कि किस प्रकार स्थानीय एवं महानगरीय एक दूसरे के साथ जटिल तानेबाने में जुडे हैं।*

> Editorial Board

Editor: Michael Burawoy.

Managing Editors: Lola Busuttil, August Bagà.

Associate Editors: Margaret Abraham, Tina Uys, Raquel Sosa, Jennifer Platt, Robert Van Krieken.

Consulting Editors: Izabela Barlinska, Louis Chauvel, Dilek Cindoglu, Tom Dwyer, Jan Fritz, Sari Hanafi, Jaime Jiménez, Habibul Khondker, Simon Mapadimeng, Ishwar Modi, Nikita Pokrovsky, Emma Porio, Yoshimichi Sato, Vineeta Sinha, Benjamin Tejerina, Chin-Chun Yi, Elena Zdravomyslova.

Regional Editors

Arab World: Sari Hanafi, Mounir Saidani.

Brazil: Gustavo Taniguti, Juliana Tonche, Pedro Mancini, Fabio Silva Tsunoda, Dmitri Cerboncini Fernandes, Andreza Galli, Renata Barreto Preturlan.

Colombia: María José Álvarez Rivadulla, Sebastián Villamizar Santamaría, Andrés Castro Araújo.

India: Ishwar Modi, Rajiv Gupta, Rashmi Jain, Uday Singh.

Iran: Reyhaneh Javadi, Shahrad Shahvand, Fatemeh Moghaddasi, Saghar Bozorgi, Jalal Karimian.

Japan: Kazuhisa Nishihara, Mari Shiba, Yoshiya Shiotani, Kousuke Himeno, Tomohiro Takami, Yutaka Iwadate, Kazuhiro Ikeda, Yu Fukuda, Michiko Sambe, Takako Sato.

Poland: Mikołaj Mierzejewski, Anna Piekutowska, Karolina Mikołajewska, Jakub Rozenbaum, Tomasz Piątek, Julia Legat, Mikołaj Niziński, Anna Rzeźnik, Konrad Siemaszko, Patrycja Pendrakowska, Wojtek Perchuć, Adam Mueller

Russia: Elena Zdravomyslova, Elena Nikoforova, Asja Voronkova.

Taiwan: Jing-Mao Ho.

Ukraine: Svitlana Khutka

Media Consultants: Annie Lin, José Reguera.

> इस अंक में In This Issue

सम्पादकीय 2

> अंतर्राष्ट्रीय अनुवाद

तहरीर पर 'नजर'
सामिया महरेज, मिश्र 4

ब्यूनोस आयर्स में आई.एस.ए. फोरम की चुनौतियाँ
अलबर्टो एल. बियालाकोव्स्की एवं एलिशिया आई. पालेरमो, अर्जेन्टीना 6

पोलिश अप्रवासी
ईवा पालेन्जा–मॉलेन्बेक, जर्मनी 8

> असमान विश्व में समाजशास्त्र: परिचर्चा जारी है

स्थानीय महानगरीयतावाद
जेफ्रे सी. अलेक्जेन्डर, यू.एस.ए. 10

लैटिन अमेरिका–नियति का एक समुदाय?
पावलो हेन्रिक मार्टिन्स्, ब्राजील 12

> दुनियां के विभिन्न क्षेत्रों से

उत्तर–सोवियत समाजशास्त्र की शोचनीय स्थिति
विक्टर वखशेट्यान, रूस 14

न्यूजीलैण्ड में माओरी समाजशास्त्र
ट्रेसी मेक्इन्टोश, न्यूजीलैण्ड 16

उत्तर–सोवियत अर्मेनिया में ''नवीन निर्धनता'' पर एक टिप्पणी
जवोर्ग पोगोस्यान, अर्मेनियां 17

> विशेष स्तम्भ

इतिहास का कोना: करण्ट सोशियोलॉजी की जीवन्तता
जेनिफर प्लाट, यू.के. एवं इलोइजा मार्टिन, ब्राजील 18

समाजशास्त्र का अध्यापन: वैश्विक कक्षा
लेरिसा टिटारेन्को, बेलारुस एवं क्रेग. बी. लिटिल, यू.एस.ए. 20

आई.एस.ए. की राजनीति: राष्ट्रीय संघो के प्रति पूर्वाग्रह
रोर्बटो सिप्रियानी, इटली 22

सम्पादकों का परिचय: जापानी दल 23

> स्मृति में

86 वर्ष की आयु में जॉन रेक्स का निधन
सेली टॉमलिनसन एवं राबर्ट मूर, यू.के. 24

कुर्ट जोनासोह्न, 1920–2011
सेलिन सेन्ट–पियरे, कनाडा 25

> सम्मेलन

कोलम्बियन समाजशास्त्र में विरासत और सम्बन्ध विच्छेद
पेट्रिशिया एस. जरामिलो गुएरा तथा फर्नान्डो क्यूबाइड्स, कोलम्बिया 26

यूरेशियन क्षेत्र में तुर्किक समाजशास्त्र
ऐलेना जाड्रावोमिस्लोवा, रुस 28

भारतीय समाजशास्त्र परिषद की हीरक जयन्ती
टी.के.उमन, भारत 30

ब्रिक देशों मे सामाजिक स्तरीकरण
टॉम डायर, ब्राजील 32

>तहरीर पर 'नजर'

सामिया महरेज, अमेरिकन यूनिवर्सिटी इन कायरो, मिस्र

सामिया महरेज ए. यू. सी. में अरब एवं इस्लामिक सभ्यता विभाग में अरबी साहित्य की प्रसिद्ध प्रोफेसर हैं तथा सेन्टर फॉर ट्रान्सलेशन स्टडीज की निदेशक हैं। मैं हाल ही में उनसे काहिरा में मिला जहाँ उन्होंने भविष्य में प्रकाशित होने वाली पुस्तक 'इजिप्ट'स रिवोल्यूशन' के कुछ अध्याय दिखाये। इस पुस्तक में वे विचारोत्तेजक पक्ष सम्मिलित हैं जिन्हें सामिया महरेज ने तहरीर में अपने विद्यार्थियों के साथ लिखा है। मैंने सामिया महरेज से आग्रह किया कि वे ग्लोबल डायलॉग के लिए एक लेख लिखें जो कि यहाँ प्रस्तुत है।

25 जनवरी की क्रान्ति की वार्षिक जयन्ती पर तहरीर चौक पर एक विशाल ध्वज जनरल हुसैन तांतवी (बायें), भूतपूर्व राष्ट्रपती होस्नी मुबारक (मध्य में), तथा भूतपूर्व आन्तरिक मन्त्री हबीब अल–अदली को फॉसी की सजा की मांग करता हुआ। फंदों के नीचे लिखा है : ''जनता का शासन''। चित्र मोना अबाजा द्वारा।

जब तक यह लेख प्रकाशित होगा 25 जनवरी को प्रारम्भ हुए मिस्र में असन्तोष को एक वर्ष पूरा हो जायगा जिसके फलस्वरूप 11 फरवरी, 2011 को मिस्र के राष्ट्रपति होस्नी मुबारक को सत्ता से हटा दिया गया। विद्रोहियों ने अनेक जटिल तरीकों के साथ यह वायदे किये कि मिस्र के भविष्य को क्या दिशा दी जावेगी और अरब क्षेत्र में तथा विश्व में मिस्र की स्थिति क्या होगी। पिछले महीनों में विशेषतः जनवरी से विरोध की शुरूआत के बाद क्रान्ति एवं इंकलाब (सत्ता पलट) की स्थितियाँ और इनके बीच का सम्बन्ध निरन्तर अनेक विमर्शों को उत्पन्न कर रहा है। प्रतिरोध एवं असहमती के पक्षों की निरन्तरता बनी है। मिस्र के निवासी इन सब पक्षों से न केवल सम्बन्धित हैं बल्कि समन्वित रूप से नए नाम एवं नए संदर्भ उभारने की कोशिश में भी लगे हैं। एक तथ्य जरूर स्पष्ट है कि 25 जनवरी, 2011 और उसके बाद अनवरत् अठारह दिन तक तहरीर में विभिन्न प्रकार के प्रदर्शनों, हिंसक घटनाओं, धरना, हड़ताल इत्यादि के कारण एक नवीन ऐतिहासिक एवं प्रतीकात्मक जीवन स्वरूप ग्रहण करता है। मैदान अल तहरीर अर्थात् तहरीर चौक मिस्र में होने वाले बदलाव का प्रतीक बन जाता है। यह स्थान एक ऐसा मापन है जो राष्ट्रीय विद्रोह को प्रतिनिधित्व प्रदान करता है और मिस्र के निवासियों के जीवन को अनेक तरीकों से बदलता है।

25 जनवरी के उपरान्त मिस्र के लोग और यहां तक कि विश्व के लोग मैदान अल तहरीर के प्रति आकर्षित होते हैं। इस स्थान पर सैंकड़ों लोग शहीद हुए एवं हजारों लोग घायल हुए अथवा उन्हें बन्दी बनया गया। परिणामस्वरूप यह स्थान एक प्रदर्शनीस्थल बन गया। राजसत्ता इस स्थान से डरने लगी थी। मेरे एक सहयोगी अम्र शलकनी का मत है कि मैदान अल तहरीर एक ऐसा स्थान है जहाँ आप जाकर क्रान्ति का ''अवलोकन'' कर सकते हैं। इस स्थान को देखें, इसके कुछ स्थलों को रूचिपूर्वक देखें, और फिर घर चले जाएँ जहाँ एक भिन्न प्रकार का समयकेन्द्र आपके सम्मुख होगा। यह सच है कि लोग मैदान अल तहरीर में क्रान्ति का अवलोकन करने आते हैं। ऐसे भी अनेक लोग हैं जो घर पर टेलीविजन के माध्यम से या सामाजिक मीडिया के माध्यम से इस क्रान्ति को देखते हैं। देखने अथवा अवलोकन करने की यह प्रक्रिया अनेक लोगों को सक्रिय बनाती है। ऐसे लोग जो केवल क्रान्ति को देख रहे थे या टी. वी. अथवा सामाजिक मीडिया पर क्रान्ति के दर्शक थे क्रान्तिकारी क्रियाओं में संलग्न हो गए।

>>

सेना द्वारा महिला बन्दियों के जबरन कौमार्य परीक्षण पर सफल अभियोग के पश्चात काहिरा में महिलाओं के अधिकारों के समर्थन में दिसम्बर में निकाली गयी रैली में समीरा इब्राहिम विजय चिन्ह प्रदर्शित करती हुई।

परिणाम स्वरूप नवीन प्रकार की विषयगतताएँ उभरकर आईं।

राजनीतिक क्रियाओं को उभारने के बजाए इस सन्दर्भ में घटना ने क्रान्तिकारी गतिशीलता एवं आमूल चूल परिवर्तन की प्रक्रिया के साधन के रूप में स्वयं को स्थापित किया। वास्तव में आने वाली विभिन्न परिवर्तनकारी लहरों एवं मिस्त्र में विरोध की इस महत्वपूर्ण घटना जिसमें अनेक महत्व पूर्ण व्यक्तियों से लेकर सामान्यलोग एवं महज प्रदर्शनों से लेकर हिंसा वे पक्ष हैं जिनके आधार पर डॉक्यूमेन्ट निर्मित हुए हैं। सम्बन्धित घटनाओं से निर्मित ज्ञान को सुनिश्चितता दी गई है और उसे लोगों तक प्रेषित किया गया है और इस कारण इन घटनाओं का बहुआयामी एवं स्थाई प्रभाव हुआ है। मिस्र के निवासियों ने स्थान (सार्वजनिक एवं निजी, वास्तविक एवं आभासी) के साथ नवीन सम्बन्ध निर्मित किए हैं। मिस्र के निवासियों को अपने शरीर में एक नवीन प्रकार की स्वामित्व की शक्ति का आभास होता है और वे अपनी मौखिक या लिखित भाषा की स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अधिकार को निर्मित करते हैं और उसे प्रयुक्त करते हैं।

मुबारक के विगत तीस वर्षों के शासन में सैन्य बल जुटा जो कि शासक शक्ति थी ने मिस्र में स्थानीय क्षेत्र/सार्वजनिक क्षेत्र, सार्वजनिक–जन राजनीति एवं सार्वजनिक– जन संस्कृति पर अपना नियन्त्रण स्थापित किया था। जनवरी 2011 के उपरान्त मिस्र में अनेक बदलाव आए जिन्हें इन अवयवों में स्पष्टया उभरते हुए देखा जा सकता है। मुबारक की सत्ता ने आपातकाल कानूनों को लागू किया जिसके कारण नजरबन्दी, कारावास एवं प्रताड़ना को वैधता मिली। अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को प्रतिबन्धित कर दिया गया परन्तु इस सबके बावजूद सार्वजनिक क्षेत्रों में मिस्र के निवासियों का अधिकार करने हेतु प्रदर्शन एवं व्यापक जन प्रतिरोध के आन्दोलन रूक नहीं सके। उनकी अनवरतता ने इन क्षेत्रों की विशेषताओं को परिवर्तित किया।

मिस्र की क्रान्ति और सम्बन्धित जनप्रतिरोध की बहुस्तरीय इन महत्वपूर्ण घटनाओं ने होस्नी मुबारक की नियन्त्रण की राजनीति को कमजोर एवं खण्डित करने में योगदान दिया। इन आन्दोलनों ने मिस्र में भयमुक्त युग की शुरूआत की जिसमें इन बहुस्तरीय घटनाओं का महत्व पूर्ण योगदान रहा जो कि प्राप्त की गई नवीन स्वतन्त्रता एवं स्थान, शरीर एवं भाषा की स्वामित्व की प्रकृति का संरक्षण करती रही। इस हेतु इन्होंने सृजनात्मक प्रकृति के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक कृत्यों को जन्म दिया जिसमें नवीन भाषा, सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्तियाँ, काव्यशैली इत्यादि का प्रयोग हुआ और इन स्थितियों ने इस आन्दोलन को विश्व स्तर पर प्रेरणामूलक बना दिया। ये घटनाएं जिन्होंने नववर्ष की पूर्व संध्या पर इस मैदान में जिस ऐतिहासिक घटना को स्थापित किया, के कारण मिस्र की जनता की क्रान्तिकारिता के स्तर का पता चलता है। यह ऐतिहासिक घटना 'तहरीर' को स्मरणीय बनाती है। इस घटना ने सामूहिकता को सक्रियकरण के लिए प्रेरित किया। अनेक नागरिकों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा पर इसके बावजूद समूहों की सक्रियता अर्थात प्रदर्शनों में वृद्धि होती गयी। सैन्य शासन ने अनेक प्रति–क्रान्तिकारी प्रयास किये। इस शासन के सहयोगियों ने भी, जिन्हें 'मुस्लिम ब्रदरहुड' एवं सालाफिस के नाम से जाना जाता है, इस विद्रोह को कुचलने की कोशिश की। विद्रोहियों/क्रान्तिकारियों की उर्जा को समाप्त करने के लिए भय की राजनीति एवं भेदभाव जैसे पक्षों का इस्तेमाल कर मिस्र निवासियों को बाँटने की कोशिश की। ये क्रान्तिकारी घटनाऐं अपने आप में अत्यन्त सक्रियता से उभरी और दीर्घकालिकता की विशेषता को सम्मिलित कर सकीं जबकि प्रति क्रान्तिकारी घटनाएं (जो अपने आप में महत्वपूर्ण तो थीं) अल्पकालिक प्रकृति की बन कर उभरीं। इन अल्पकालिक पर महत्वपूर्ण घटनाओं को समूचे वर्ष मुबारक के समर्थकों एवं शासक समूह, सुप्रीम काउन्सिल ऑफ द आर्म्ड फोर्सेज (एस सी ए एफ) ने संचालित किया। इन महत्वपूर्ण घटनाओं ने जहाँ पहले पक्ष की शक्ति को स्थापित किया वहीं दूसरे पक्ष की पारदर्शिता भी स्थापित हुई।

प्रारम्भ में मिस्त्र में विरोध एवं चेतना की इन महत्वपूर्ण घटनाओं में परम्परागत 'मुलीद'–एक अत्यन्त सम्मानित पारलौकिक/पराभौतिकीय व्यक्तित्व का जन्मदिन जिनकी आचार संहिताओं को मिस्त्र के सभी निवासी अपनी वर्गीय अस्मिताओं की उपेक्षा कर स्वीकारते हैं–के सांस्कारिक कृत्यों को प्रयुक्त किया, इन कृत्यों को रेडीकल स्वरूप दिया एवं इन्हें क्रान्तिकारिता हेतु प्रयुक्त किया और इस पराभौतिकीय/आध्यात्मिक व्यक्तित्व के जन्मदिन के लोकप्रिय समारोह इस हेतु प्रयुक्त हुए। पिछले वर्ष 'मुलीद' तहरीर पर हुए प्रदर्शनों का अंतरंग हिस्सा बना। ये सांस्कारिक पक्ष समारोह, उत्सव इत्यादि कृत्य ''तहरीर के स्वतन्त्र गणतन्त्र'' की रचना में सहयोगी बने और उसे मजबूती भी प्रदान की। इस महत्वपूर्ण घटना में लाखों मिस्त्र निवासियों ने सहभागिता की। ये लाखों मिस्त्री निवासी सड़कों पर प्रदर्शन कर रहे थे और समूचे देश में प्रदर्शनकारियों को प्रोत्साहित भी कर रहे थे। तहरीर में क्रान्ति के इस अवलोकन का एक महत्वपूर्ण अथवा रेडीकल परिणाम यह निकला कि तहरीर (जिसका अर्थ मुक्ति है) सम्बन्धी समझ में यह पक्ष उभरा कि तहरीर केवल एक भौगोलिक स्थल नहीं है अपितु यह सामूहिक चेतना की स्थिति है जिसके माध्यम से मिस्त्र निवासियों ने चेतना प्रदर्शित की जिसमें इश, हुरिया, अदाला इग्टिमाइया ('ish, Huriya, 'adala igtima'iya) (भोजन, स्वतन्त्रता, सामाजिक न्याय) के मूल्य सम्मिलित हुए और महत्वपूर्ण रूप में स्थापित हुए। एस.सी.ए. एफ. (SCAF) की हिंसा की लगातार लेकिन महत्वपूर्ण घटनाओं की अनवरत् पुनरावृत्ति भी हुई। साथ ही हिंसा एवं उकसावे की घटनाएं तथा कम प्रकाश में आयी नियम उल्लघंन की घटनाएं भी अस्तित्व में आयीं (मारपीट के दृश्य, बिजली के झटके देना, प्रदर्शनकारियों को मुर्गा बनाना और उन्हें रेंगने को बाध्य करना, बन्दी बनायी गयी महिलाओं के कौमार्य परीक्षण, नागरिकों पर सैन्य कानून के अनुसार कार्यवाही, सैन्य वाहनों को तेज गति से दौड़ा कर अनेक प्रदर्शनकारियों को जान से मारना, मीडिया एवं नागरिकीय संगठनों पर छापे, विदेशी पत्रकारों की गिरफ्तारी तथा उन्हें परेशान करना, चुनावी मत पत्रों सम्बन्धी घांघली, महिला शरीर को अपमानित करना तथा नैतिकता सम्बन्धी उल्लघंन)।

हिंसा सम्बन्धी घटनाओं की निरन्तरता ने सैन्य बल एवं जनता के मध्य उभरे प्रारम्भिक सद्भावना मूलक सम्बन्धों को समाप्त किया अथवा उन्हें संदेहों में बदल दिया। लेकिन अधिकांश मिस्त्र निवासी जानते हैं कि क्रान्ति की घटनाएं मिस्त्र एवं अन्य सम्बद्ध क्षेत्रों में जारी हैं। साथ ही तहरीर की महत्वपूर्ण घटनाएं वैश्विक स्तर पर लोगों की चेतना का भाग बनीं और इनकी बहुस्तरीयता को उभार मिला, विभिन्न भाषाओं के माध्यम से 'तहरीर' विश्व जनसंख्या की चेतना व समझ का भाग बनी और लोग इस सत्ता को हटाने की माँग करने लगे (अल–शाब यरिड इस्कात अल–निधाम)। ■

> ब्यूनोस आयर्स में आई. एस. ए. फोरम की चुनौतियाँ :

असमान दुनिया का समानता के समाजशास्त्र से मुकाबला

अलबर्टो एल. बियालाकोक्स्की एवं एलिशिया आई. पालेरमो, अध्यक्ष एवं सह–अध्यक्ष, स्थानीय आयोजन समिति, आई. एस. ए. फोरम, ब्यूनोस आयर्स, अर्जेन्टीना, 2012

अगस्त 1–4 (2012) से ब्यूनोस आयर्स में होने वाली आई.एस.ए. फोरम के आयोजन की तैयारियाँ चालू हैं। ब्यूनोस आयर्स के आयोजन स्थल के रूप में चुनाव से शुरू हुई इस प्रक्रिया ने अर्जेन्टीना के इस शहर और फोरम को समाजशास्त्र और सामाजिक विज्ञान के वैश्विक व बौद्धिक आदान प्रदान की पराकाष्ठा और स्थल के रूप में स्थापिता किया है। यह शायद कई दशकों में लेटिन अमेरिका में होने वाली वैश्विक स्तर की अत्यन्त महत्वपूर्ण बैठक है। यद्यपि लेटिन अमरीका की बौद्धिक क्षमता एवं साहित्य सर्वविदित है तथापि इस क्षमता का अपनी विवेचनात्मक, सामूहिक और रूपांतरण योग्य भूमिका को पहचानने हेतु कई कदम उठाने हैं। इस फोरम को संवाद और अर्न्त–महाद्वीपीय सेतु के निर्माण के विशेष अवसर और हमें प्रेरणा देने वाली वैज्ञानिक और सामाजिक चुनौतियों (उत्तर–दक्षिण और दक्षिण–उत्तर) से सामूहिक रूप से सामना करने के रूप में देखा जा सकता है।

हम इस फोरम के तीन महत्वपूर्ण पक्षों को रेखांकित करना चाहेंगे : प्रथम, बैठक की थीम ''सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिकरण'', द्वितीय, वैज्ञानिक ज्ञान और सामजिक रूपातंरण के उत्पादन में ''व्यक्ति'' की भूमिका; तृतीय, फोरम की बौद्धिक संरचना, जिसकी उपेक्षा की जा सकती है, परन्तु यह इस बैठक को महत्व प्रदान करती है।

प्रथम के संदर्भ में, थीम का चयन व शोध पत्रों के आवेदन की घोषणा हमेशा विशेषता और उपक्षेत्रों को ध्यान में रखकर की जाती है परन्तु इसमें उन प्रश्नों को, जो इनका विरोध करें, भी शामिल करना चाहिए। जटिलता के प्रतिमानों ने विविध दृष्टिकोणों के अन्वेषण में मदद की है और लघु–वृहद, विषयगत–अन्तः द्विभाजन को पाटने की सुविधा भी दी है। इस तरह से बहुस्तरीय स्तर और विभिन्न कोणों से संबोधित करना संभव हैं। ऐसे ही प्रत्येक स्तर को स्वयं के स्तर पर और साथ ही स्तरों के मध्य आदान–प्रदान से समृद्ध करने का प्रयास किया जा सकता है। अतः ''सामाजिक न्याय और लोकतांत्रीकरण'' विशिष्ट, ठोस उपक्षेत्र के रूप में और साथ ही उपक्षेत्रों के सीमाक्षेत्र से बाहर कई अर्थों के रूप में भी प्रस्तुत होता है।

समाजशास्त्र का इतिहास न्याय और असमानता के मूल्यांकन के साथ भरा हुआ है। कुछ सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य की यथास्थिति की तरफ अधिक सहानूभूति है जबकि अन्य में विवेचनात्मक परिप्रेक्ष्य को अपना कर सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहित करते हैं। यद्यपि शक्ति को समाजशास्त्र के केन्द्र में रखने से विरोधाभासों के बीच की दूरी को कम करने में मदद मिलती है। अगर दूसरी तरह से कहें तो, सभी समाजशास्त्र किसी प्रकार के आदर्शलोक (Utopia) और जैवराजनीति (biopolitics) के अभ्यास, जो शोध को प्रेरित करें और सैद्धान्तिक नींव, अनुप्रयोगों और विश्लेषण के साथ ज्ञान के हस्तांतरण में, चाहे मौन रूप से ही, की जरूरत पर जोर देते हैं।

समकालीन वैश्विक समाज में, प्रणालीगत संकट का कष्ट समाजों के भीतर और उनके बीच सामाजिक अन्याय का सामना करने के नये बौद्धिक प्रयासों की माँग करता है। मानवाधिकारों पर वैश्विक बहस का पुनः एक तरफ वैज्ञानिक और उत्पादक बलों में महत्वपूर्ण प्रगति और दूसरी तरफ उनका सामाजिक समता पर प्रभाव, प्रकृति के साथ हमारे संबंध और ग्रहों की गतिशीलता की हमारी समझ के बीच विरोधाभास को उभारती है। इन विरोधी ताकतों को नियंत्रित व नाजुक संतुलन बनाये रखने के प्रयास प्रत्यक्षवादी, प्रबुद्धता दृष्टिकोण की श्रेष्ठता – फ्रैंकफर्ट स्कूल द्वारा और हाल ही में लेटिन अमरीका की ''विवेचनात्मक व गैर–उपनिवेशी सोच'' की परम्परा का लेखकों द्वारा प्रस्तुत तर्क, पर प्रश्न लगाते हैं। वैज्ञानिक प्रगति सामाजिक न्याय या पूर्ण नागरिक सहभागिता की गारण्टी नहीं देती। अंलकृत रूप से कहे तो समाज की

>>

टेक्टोनिक प्लेट्स दासता, गरीबी, नृजातीय या लिंग भेद, नरसंहार और पारिस्थितिक तबाही के सतत अस्तित्व को दर्शाती हैं।

निस्संदेह, लोकतंत्रीकरण सिर्फ समाज के स्तर पर ही नहीं अपितु समाजों के मध्य, समाज व प्रकृति के मध्य तथा ज्ञान की अन्य शाखओं के बीच भी क्रियाशील रहता है। लेकिन स्वजातिवाद, मानविकीय–केन्द्रियता (एन्थ्रोपोसेन्ट्रिस्म) एवं बहुस्तरीय एकाधिकार न केवल समाजों पर अनुसंधान करने बल्कि समाजशास्त्रीय समझ और खोज की वैज्ञानिक प्रक्रियाओं की गहनता को भी चुनौतियाँ प्रस्तुत करते हैं। ''लेटिन अमेरिका के नव–निर्भरता स्कूल से उभरते उग्र मीमांसीय आलोचना'' का जिक्र करते हुए सुजाता पटेल (2010) लिखती हैं : ''एनिबाल क्वीजानो, एनरिक डसेल और वाल्टर मिग्नोलो जैसे विचारकों ने इस स्थिति की इस तर्क के साथ व्याख्या की है कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्त में निहित सार्वभौमिकरण ज्ञान की भू–राजनीति का हिस्सा है। आधुनिकता और सामाजिक सिद्धान्त के साथ इसके सबंधं का आकलन इस प्रक्रिया की कुंजी है।''

दूसरे शब्दों में, यह सिर्फ विभिन्न शोध विषयों में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के विश्लेषण का मुद्दा नहीं है बल्कि ज्ञानमीमांसीय विषमताओं और अधिपति सैद्धान्तिकरण के मुद्दे उठाने का है। नये सैद्धान्तिक धाराओं के संवादकीय उपागम आधुनिकता के मानदंड में निहित विषमताओं की स्थिरता से इंकार करते हैं और विरोधाभासों को पार किया जा सकता है से शुरू होते हैं। इस अनुभव को अफ्रीकी विश्लेषणकर्ताओं ने उभारा है। ''नाइजीरिया में समाजशास्त्र करना विभिन्न चुनौतीपूर्ण कालों से गुजरा है। वर्तमान में, नाइजीरिया, वास्तव में अफ्रीका, में समाजशास्त्रियों के लिए सबसे अहम् चुनौती, अफ्रीकी सामाजिक यथार्थ को समझना और व्याख्या करना है। यह सामाजिक यथार्थ अन्तर्जात प्रारूपों जो न केवल उभरती सामाजिक संरचना में विरोधाभास और तनाव की प्रकृति ऐसे प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न अभिकरणों के चरित्र को भी कैद करते हैं, से बढ़ाया जाता है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें प्रतिमानात्मक परिवर्तन चाहिए'' (Onyeonoru, 2010:280)।

"दशकों के बाद लैटिन अमेरिका में ऐसा महत्वपूर्ण अधिवेशन"

इस तरह या किसी अन्य तरह हम विश्वास करते हैं कि इस तरह की सोच नवीन ''ज्ञान की पारिस्थितिकी'' को स्थापित करने तथा एक नवीन संवादकीय प्रतिमान अनुरूप वैज्ञानिक आदान प्रदान की आवश्यकता को व्यक्त करती है (डि सोसा सांतोस, 2010)। आने वाले लगातार संकट के संदर्भ में, समाजशास्त्री बदलाव और आलोचना के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकते हैं जिनके लिए अंतर महाद्वीपीय समझ आवश्यक है। इसका मतलब न तो अंतर्जात सोच को छोडना है और न ही यह कि हम क्षितीजीय सोच के साथ बहस करने की आकांक्षा छोड़ दें।

सामाजिक असमानताओं और लगातार गतिशील दुनिया की पृष्ठभूमि में, समाजशास्त्रीयों के लिए इस यथार्थ और इसके बदलाव की व्याख्या और समझ दोनों में योगदान देने के लिए बहुत कुछ है। वैश्विक संकट समाज के व्यापक और विविध भागों को कई संदर्भों में अधिकारिक रूप से प्रभावित कर रहा है। हम अधिक भावबोधक मांगों और वर्तमान और भविष्य में प्रभावित समूहों के एकाधिक संघर्ष को जितना वैश्विक उत्तर में उतना ही वैश्विक दक्षिण में, समर्थन दे सकते हैं।

यह हमें यह प्रश्न पूछने को प्रेरित करता है : क्या आई. एस. ए. फोरम 2012 इन चुनौतियों का सामना कर सकता है? बिना किसी शंका के, एक अद्वितीय संरचना के रूप में यह इन्हें पूरा कर सकता है। वास्तव में, फोरम का उद्देश्य संवाद का एक साधन और साथ सोचने की एक जगह के रूप में विकसित होना है ताकि इन बहसों को और गहराई से मजबूत बनाया जा सके। एक सामाजिक और बौद्धिक शक्ति के रूप में – एक संगोष्ठी और बैठक की जगह के रूप में, इसमें रचनात्मक आदान–प्रदान द्वारा वैश्विक सामाजिक विश्लेषण को आगे बढ़ाने की संभावना है। वास्तव में यह एक महत्व पूर्ण एवं कर्मकर्ता समुदाय का निर्माण करता है जो सामान्य मेधा का एक हिस्सा हैं, एक मेधा जो कि सामुदायिक और सार्वजनिक दोनों ही है।

हम एक गहन और भाइचारे के दृश्य के लिए लड़ने के लिए प्रतिबद्ध हैं। हम संयुक्त और साझा रूप से, शोध समितियों, वर्किंग एवं थीमेटिक समूहों, संयुक्त सत्रों के साथ ही प्लेनरी और सार्वजनिक फोरम के भीतर और बीच में बहस और आदान–प्रदान के लिए मंच प्रदान करने की आशा करते हैं। ■

References

De Sousa Santos, B. (2010) *Para descolonizar Occidente. Más allá del pensamiento abismal*. Buenos Aires: CLACSO-Prometeo-UBA.

Onyeonoru, I. P. (2010) "Challenges of Doing Sociology in a Globalizing South: Between Indigenization and Emergent Structures" Pp.268-281 in Michael Burawoy, Chang Mau-kuei, and Michelle Fei-yu Hsieh (eds.) *Facing an Unequal World: Challenges for a Global Sociology (Volume I)*. Institute of Sociology, Academia Sinica, Taiwan, and Council of National Associations of the International Sociological Association.

Patel, S. (2010) "The Imperative and the Challenge of Diversity: Reconstructing Sociological Traditions in an Unequal World" Pp.48-60 in Michael Burawoy, Chang Mau-kuei, and Michelle Fei-yu Hsieh (eds.) *Facing an Unequal World: Challenges for a Global Sociology (Volume I)*. Institute of Sociology, Academia Sinica, Taiwan, and Council of National Associations of the International Sociological Association.

> पोलिश अप्रवासी : साधन सम्पन्न बहुराष्ट्रीय अथवा अतिथि श्रमिक?

ईवा पालेन्जा–मॉलेन्बेक, यूनिवर्सिटी ऑफ फ्रैंकफर्ट, जर्मनी

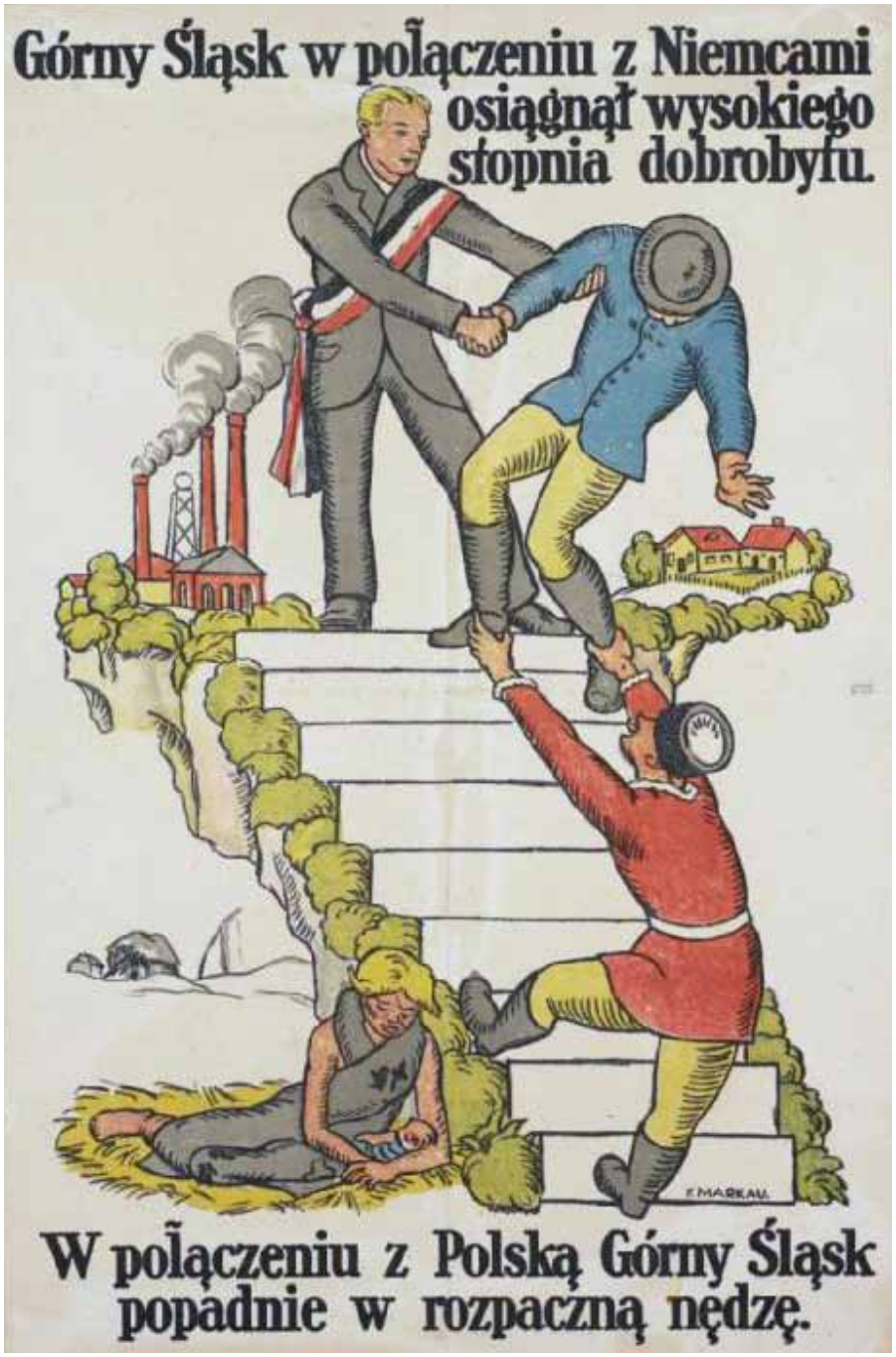

ऊपरी सिलेसिया के जर्मनी के साथ निकट सम्बन्धों का एक लम्बा और ठीक से याद रखा जाने वाला इतिहास है। उपरोक्त प्रथम विश्वयुद्ध के बाद की तस्वीर में ऊपरी सिलेसिया को पोलैण्ड (जिसका कि प्रतिनिधित्व बच्चे के साथ औरत की गरीबी द्वारा दर्शित है) तथा जर्मनी (जिसका कि प्रतिनिधित्व कारखाने के समृद्धि तथा ग्रामीण मकानों द्वारा दर्शित है) के मध्य विदीर्ण रुप में चित्रित किया गया है। अभी तक भी यहाँ के अनेक निवासी अपने आपको इन दोनों दुनियाओं के बीच फंसा हुआ पाते हैं। मूल चित्र इम्पीरियल वॉर म्यूजियम, लन्दन, यू.के. में रखा हुआ है।

90 के दशक के उपरान्त अप्रवासी अध्ययनों में एक नवीन उपागम उभार ले रहा है। क्लासिकल (शास्त्रीय) पैराडिम प्रवसन की प्रक्रिया को जीवन में एक बार उत्पन्न हुई प्रघटना के रूप में विवेचित करता है जो अन्ततः अप्रवासियों को सम्बद्ध समाज में सात्मीकरण के यथार्थ का भाग बना देता है अथवा वे अप्रवासी स्थायी रूप से अपने देश वापस लौट जाते हैं। 'बहुराष्ट्रीय' प्रवसन से सम्बन्धित अनुसंधान यह तर्क बताने से सम्बन्धित है कि किस प्रकार अप्रवासी एक से अधिक राष्ट्रीय समाजों में सम्बन्धों को बनाते हैं एवं उन्हें संचालित करते हैं। यह उपागम उत्तर–अमेरिकन अनुभवों के आधार पर विकसित हुआ पर इस प्रकार की समान प्रघटना यूरोप में भी अवलोकित की जा सकती है। ऊपरी सिलेसिया में (जो अब पौलेण्ड है) में अल्पकालिक प्रवसन ऐसी ही एक प्रघटना है। परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के पहले पौलेण्ड एव जर्मनी की सीमाओं के क्षेत्र में राष्ट्रीय नीतियों का उल्लंघन एवं उनकी उपेक्षा के दृष्टान्त मिलते रहे हैं।

जर्मन नागरिकता कानून में निहित 'इयुस सांग्यूइनिस' (ius sanguinis) सिद्धान्त के अनुसार इस क्षेत्र के अनेक निवासी जर्मन नागरिकता प्राप्त करने के अधिकारी हैं भले ही जर्मनी के साथ उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध हों अथवा न हों। इन निवासियों को जर्मन नागरिकता प्राप्त करने के लिए पौलेण्ड की नागरिकता को त्यागने की आवश्यकता नहीं थी। 1990 के दशक के उपरान्त इस दोहरी सदस्यता में निहित कमजोरियों का लाभ उठा कर जर्मनी के श्रम बाजार में पौलेण्ड के निवासियों ने सुगमता से प्रवेश कर लिया हालांकि सन् 2011 तक पोलेण्ड के नागरिकों का जर्मनी में प्रवेश निषिद्ध था। अनेक सिलेसियन जर्मनी में

>>

स्थायी रूप में बस गये। सैकड़ों–हजारों ने पोलैण्ड में स्थायी निवास को प्राथमिकता दी और रोजगार के लिए जर्मनी आने जाने लगे। इस तरह उनके जीवन स्तर में उन्नयन हुआ जो उनकी हैसियत के बाहर होता यदि वे पौलेण्ड के श्रम बाजार पर आश्रित होते।

सिलेसियन की दोहरी नागरिकता यह व्यक्त करती है कि विधिक विशेषाधिकार प्राप्त कर कोई भी स्वाभाविक रूप में 'बहुराष्ट्रीय' नहीं बनता। बहुमत जनसंख्या ने स्थायी रूप से एक गत्यात्मक जीवन शैली को अपना लिया पर इसका अर्थ यह नहीं है कि वे ट्रान्स माइग्रेन्ट (दोहरे प्रवासी) बन गये अर्थात/ ऐसे लोग 'जो दोनों समाजों में साथ–साथ विद्यमान' हों। हम सामान्यतः ऐसे अप्रवासियों का प्रकार पाते हैं जो स्थायी रूप से गत्यात्मक जीवन शैली को अपना चुके हैं परन्तु अपनी सामाजिक सम्बद्धता उस समाज से बनाये रखी है जहाँ उन्होंने जन्म लिया है। यह तथ्य आश्चर्यजनक हैं। पहले दृष्टान्त में तो ऐसा प्रतीत होता है मानों ऐसे अप्रवासियों को 'दोहरा अप्रवासी' बनना ही था क्योंकि उनकी सांस्कृतिक विरासत इस स्थिति के अनुकूल थी (जैसे द्विभाषायी अस्मिता, परम्परा के रूप में प्रवसन), उनके पास विधिक विशेषाधिकार थे (दोहरी नागरिकता) एवं साथ ही उन्हें रोजगार प्रवसन से सम्बद्ध उद्योगों में मिला था (बहु राष्ट्रों में कार्यरत कम्पनियाँ, सेवा प्रदान करने वाले उद्योग, इत्यादि)।

परन्तु वास्तविकता कुछ अधिक जटिल बन कर उभरी है। एक तरफ दुहरी नागरिकता के कारण, इन अप्रवासियों को अधिक रोजगार अवसर उपलब्ध हुए हैं जो कि रोजगार चयन की दृष्टि से व्यापक हैं। ये अप्रवासी जर्मनी में पूर्ण कालिक एवं अंश कालिक रोजगार प्राप्त करते हैं। स्थायी रोजगार पैंशन का लाभ तथा साथ ही पौलेण्ड में प्रशिक्षण उन्हें उपलब्ध हो जाता है। यह उपलब्धता उन्हें क्रिया का व्यापक क्षेत्र प्रदान करती है तथा पेशे के योजना निर्माण को उपस्थित करती हैं। परिणाम स्वरूप जर्मनी में सात्मीकृत गैर–अप्रवासियों के साथ उनकी समानता सम्भव होती है।

दूसरी ओर पोलैण्ड में विद्यमान सुरक्षा के उच्चस्तर के कारण अनवरत रुप से प्रवसन प्रक्रिया को प्रात्साहन मिला है साथ ही जिस समाज में वे अप्रवासी के रुप में गये हैं वहां सात्मीकरण की प्रक्रिया को उनके सम्बन्ध में हतोत्साहन की स्थिति का सामना करना पडता है। अतः सातत्य के दूसरे सिरे पर अवैध अप्रवासी हैं जो सात्मीकरण के लिए बाध्य हैं अन्यथा उन्हें गिरफ्तार किया जा सकता है या निर्वासित किया जा सकता है। उनकी भाषायी कुशलता की कमी तथा जर्मनी के समाज के विषय में कम समझ इन 'वैध' जर्मनी के नागरिकों को उन कम्पनीयों पर आश्रित कर देती है जिन्होंने उन्हें भेजा है। अप्रवासियों के एक समूह के प्रबन्धन ने इस स्थिति को इस रुप में प्रस्तुत किया है ''उन्हें पता है कि उनका कोई यहां उपस्थित है जो उनकी देखभाल में संलग्न है (....) वे यह महसूस करते हैं कि यदि उनके पास लाल (जर्मन) पासर्पोट है तो उनके पास बहुत कुछ है। उनका सिर्फ धन कमाना ही उद्धेश्य है और यही उनके लिए बहुत कुछ है।'' दोहरी नागरिकता की विवेचना आसानी से शोषण की प्रक्रिया के उस पक्ष के समान है जो 1950 के दशक में अतिथि श्रमिकों के साथ होती थी। यह शोषण उन संसाधन सम्पन्न कर्ताओं के संदर्भ में कम था जो समान सहजता के साथ दो राष्ट्रीय समाजों की मांग के साथ समझौता करते हैं। आज भी ऐसे संसाधन सम्पन्न कर्ता सिलेसियन अप्रवासियों के बीच में विद्यमान हैं। उनके पास आवश्यक भाषाई कुशलता, संस्कृति पूंजी, पेशेवर योग्यता एवं सामाजिक पूंजी पायी जाती है। वे कारक, जिनके कारण कुछ अप्रवासी संसाधन पूर्ण कर्ता बन जाते हैं और कुछ या शेष अन्य 'अतिथि श्रमिक' के रुप में आश्रित बन जाते हैं, अत्यन्त जटिल है और उनकी यहां विस्तार से चर्चा नहीं की जा सकती। इन 'अतिथि श्रमिकों की जीवन शैली' का समर्थन करने वाला एक कारक तो बहुराष्ट्रीय प्रवसन उद्योगों का अस्तित्व है जो रोजगार के अनेक अवसर प्रस्तुत करता है तथा गतिशीलता को प्रोत्साहित करता है। पर इसके साथ ही यह उद्योग इन अप्रवासियों के जीवन को स्वंय के नियन्त्रण से बाहर कर देता है और आश्रितता की स्थिति उभर जाती है। परिणाम स्वरुप ये अप्रवासी जिस समाज में आये हैं वहॉ पाये जाने वाले अवसर एवं प्रत्यक्ष अन्तःक्रिया की उनकी आवश्यकता का क्षेत्र सीमित हो जाता है।

इस तरह के प्रवसन उद्योग को सभी औद्यौगिक देशों में महत्वपूर्ण विकास के साथ उभरते हुए देखा जा सकता है। इन औद्यौगिक देशों में 'स्तरीकृत अर्थात स्थापित रोजगार सम्बन्धों' का ह्रास हो रहा है और इन्हें अत्यन्त विशिष्ठ चरित्र के अनियमित रोजगार प्रतिस्थापित कर रहे हैं। अतः आंशिक एवं अल्पकालिक रोजगारों का सिलेसियन अप्रवासियों के मध्य प्रभुत्व है जो उन्हें अन्य अनियमित रोजगारों के साथ जोड देता है। यह भी सम्भव है कि ये अप्रवासी शिक्षा एवं स्थायी रोजगार के साथ पोलैण्ड में जुड जायें। जैसा कि सभी बडे देशों के सामाजिक विकास में देखा जा सकता है यहां भी यह बताना कठिन है कि कारण व परिणाम क्या हैं तथा कौन सफल है एवं कौन असफल। एक तरफ जर्मनी में अनियमित रोजगार इस प्रकार के रोजगार को प्रोत्साहित करता है अथवा प्रारम्भिक चरण में इसे सम्भव बना देता है परिणाम स्वरुप यह प्रवासियों के जीवन में और अधिक अनियमितता को बढाता जाता है। जबकि दूसरी ओर यह प्रक्रिया पोलैण्ड में कहीं ज्यादा विकसित है जहां नियोजन मूलक व्यवस्था से 'उत्तर–औद्यौगिक' अर्थव्यवस्था की तरफ बदलाव हुआ है। इस प्रभाव के कारण श्रम बाजर में रुपान्तरण हुए और अल्पकालिक प्रवसन आकर्षक एवं अपरिहार्य हो गया। अतः वर्तमान विश्व में हम पाते हैं कि प्रवसन ने ऐसे अनेक आश्चर्यजनक एवं आकर्षक स्वरुपों को जन्म दिया है जिनसे सात्मीकरण के पुराने प्रारुपों को चुनौती एवं अस्वीकृति का सामना करना पड रहा है। ■

> स्थानीय महानगरीयतावाद

जेफ्रे सी. अलेक्जेन्डर, येल विश्वविद्यालय, संयुक्त राज्य अमेरिका, समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की आई. एस. ए. की शोध समिति (आर. सी. 16) के पूर्व अध्यक्ष एवं आई. एस. ए. द्वारा 2010 में मैताई डोगान फाउन्डेशन पुरस्कार के विजेता।

यहां प्रकृति पर दो परस्पर विरोधी सौन्दर्यपरक प्रतिनिधित्व, एक चीनी एवं दूसरा अमेरिकन दर्शाए गये हैं। यद्यपि दोनों ही देशज अनुभवों पर आधारित नहीं हैं लेकिन फिर भी ये दोनों लम्बी अवधि की महानगरीयता तथा स्थानीय परंपराओं एवं शैली पर आधारित हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि कला प्रकृति को कभी भी वस्तुपरक तरीके से नहीं दर्शाती, जिस प्रकार समाजशास्त्र समाज को पारदर्शी तरीके से दर्शाता है।

पिऔटर स्टोम्का एवं माइकल बुरावे के मध्य की यह बहस न केवल अकादमिक दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है अपितु इसकी एक लम्बे समय से उपेक्षा भी की जा रही थी। ये दोनों वर्तमान में विश्व के प्रभावी समाजशास्त्रीय सिद्धान्तकार हैं। इनका संवाद न केवल महत्वपूर्ण है अपितु अनेक नवीन विचारों को सम्मिलित करता है। इन दोनों के मध्य की वैचारिक भिन्नताएँ यथार्थपरक एवं उतनी ही व्यवस्थित हैं जितनी कि पूर्व के सामाजिक विचारों में पाई जाती थीं। इनके दृष्टिकोणों की भिन्नता में पूर्व के सामाजिक चिन्तनों की दृष्टि नजर आती है। इन दोनों के विचार एवं इनकी बहस समय के साथ–साथ भविष्य में न केवल और अधिक उत्तेजक बनेगी अपितु इसमें नवीनताओं के समावेश भी होंगे।

समाजशास्त्र तार्किकता, सार्वभौमिकता एवं सैद्धान्तिक सामान्यता को प्रेरित करता है। विलहैम डिल्थे ने एक शताब्दी पूर्व यह तर्क दिया था कि ये सभी पक्ष प्राकृतिक विज्ञानों के क्षेत्र में अनेक उपलब्धियों को प्राप्त कर सके हैं अथवा उन उपलब्धियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसकी तुलना में मानव विज्ञानों में इन पक्षों की आकांक्षा के स्तर तुलनात्मक रूप से कम हैं। कला विषयों की भांति समाजशास्त्र जीवन अनुभव की स्थानीय स्थितियों पर न केवल केन्द्रित है अपितु उन्हें व्यक्त भी करता है। इसका कदापि यह अर्थ नहीं है कि समाजशास्त्र स्थानीय अथवा स्वनिर्मित अथवा स्वसन्दर्भ से विकसित प्रघटनाओं के अध्ययन पर ही बल देता हो।

महत्वपूर्ण पेन्टिंग्स की विद्या सदैव उन सौन्दर्यपरक परम्पराओं से निर्मित होती है जो स्थानीय प्रयासों के अन्तर्गत अभिव्यक्त होते हैं और उसके उपरान्त वे प्रयास स्थानीयता से परे चले जाते हैं। साम्राज्यवादी चीन में वहां की कथित शास्त्रीय परम्पराओं से ये बाह्य विधाएं अस्तित्व में आईं। उन्नीसवीं शताब्दी

>>

की आधुनिक पश्चिमी कला का उभार भी यह दर्शाता है कि स्थानीय यूरोपियन कलाकारों ने अनवरत् उन सन्दर्भों को महत्व प्रदान किया जिन्हें वे आधुनिक परम्परा की संज्ञा देते हैं। ऐसे कलाकार जो राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास कर रहे थे अथवा राष्ट्रीय शैली को विकसित करना चाहते थे ने स्थानीय परम्पराओं को इतना विस्तार दिया और उनमें अनेक अवयव सम्मिलित कर उनको राष्ट्रीय, सौन्दर्यात्मक शैली के परे की शैली के रूप में स्थापित किया जिसका केन्द्र पेरिस में है। इसके अन्तर्गत राष्ट्रीय स्थानीयताओं के परे जाकर बहुनगरीयताओं को महत्व दिया जाता है। पेरिस इसका उदाहरण है।

समाजशास्त्र की स्थिति से यह स्थिति भिन्न नहीं है। जैसा कला में होता है ठीक उसी प्रकार समाजशास्त्र भी ''स्थानीय'' हैं क्योंकि समाजशास्त्र एक निश्चित समय एवं स्थान से सम्बन्धित समुदायों के सामाजिक अनुभवों की विवेचना के प्रयासों से उभरकर आता हैं। अमेरिकन, ब्रितानी, फ्रांसीसी एवं जर्मन समाजशास्त्र भी इसके अपवाद नहीं हैं। एक समाजशास्त्र दूसरे समाजशास्त्र से भिन्न है और प्रत्येक भिन्नता समय एवं स्थान से निर्देशित भिन्न अनुभवों को व्यक्त करती है और उन पक्षों को निर्धारित करती है जिनकी समाजशास्त्रीय समझ के लिए आवश्यकता होती है।

हम राष्ट्रीय समाजशास्त्रों को पढकर बहुत कुछ सीख सकते हैं। हमें यह पता लग सकता हैं कि ऐसे कौन से राष्ट्रीय मुद्दे हैं जिनका निर्वचन आवश्यक है, राष्ट्रीय स्तर पर शक्ति संघर्ष क्या है एवं राष्ट्रीय स्तर पर वे सॉस्कृतिक अर्थ कौन से हैं जिन पर विवाद उत्पन्न हुए हैं। हम यह सब कुछ तभी सीख सकते हैं जब उपरोक्त पक्षों से सम्बन्धित समाजशास्त्रीय लेखन विश्व की सभी सामान्य भाषाओं में अनुवादित हो। यह अभिव्यक्ति चाहे तो सम्मेलनों के माध्यम से हो अथवा प्रकाशन के द्वारा हो। स्थानीय भाषाओं और स्थानीय भाषाओं से परे की भाषाओं में होने वाले ऐसे अनुवाद स्थानीय एवं मूर्त के विषय में ज्ञान को तीव्र गति से विकसित करेंगे।

कला की भाँति स्थानीय स्तर पर की जाने वाली समाजशास्त्रीय कोशिशें मूर्त स्थान एवं मूर्त समय पर आधारित सृजन के रूप में अवधारणात्मक स्थिति प्राप्त करती हैं। ऐसा सृजन स्थानीय एवं स्थानीय के अतिरिक्त विद्यमान उन बौद्धिक परम्पराओं से आगे बढ़ता हैं जो राष्ट्रों से सम्बन्धित हैं। इसके साथ–साथ इसमें वैश्विक स्तर की बौद्धिक एवं धार्मिक परम्पराओं का समावेश हो जाता है। इन सबके कारण क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय अस्मिताएँ निर्मित एवं पुनर्निर्मित होती रहती हैं। अनेक शताब्दियों का इतिहास यही अभिव्यक्त करता है। चीनी एवं ताइवानी, भारतीय, कोरियाई, जापानी इत्यादि समाजशास्त्रीय परम्पराओं में स्थानीय ज्ञान एवं अर्न्तदृष्टि ने महत्वपूर्ण योगदान किए हैं और इन समाजशास्त्रों में ऐसा ज्ञान अनेक गहन विमर्शों का प्रतिनिधित्व करता है परन्तु अनेक बार यह भी देखा गया है कि इस प्रकार के प्रयास स्थानीय स्थितियों का आंशिक प्रस्तुतीकरण ही कर पाते हैं। स्थानीय समाजशास्त्री जो कि स्थानीय अध्ययनों को प्रस्तुत कर रहे हैं के प्रशिक्षण वैश्विक प्रशिक्षण संस्थानों में हुए हैं। उन्हें व्यापक, क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय शास्त्रीय परम्पराओं का व्यापक ज्ञान है। परिणामस्वरूप वे अपने स्थानीय समाजों को वि–केन्द्रित एवं महानगरीय सन्दर्भों में प्रस्तुत करने की कोशिश करते हैं।

स्थानीय महानगरीयतावाद की इस प्रकार की उपस्थिति प्रत्येक व्यवहारवादी समाजशास्त्री को प्रेरित करती है कि वह चाहे कितना ही स्थानीय क्यों न हो वैधता के लिए व्यक्तिगत/निजी स्तर के परे के मापकों को प्रयुक्त करेगा। वह यथार्थ की स्थितियों को इस प्रकार निर्मित करेगा कि वह स्थानीय संस्थागत जुड़ावों से एवं स्थानीय सामाजिक स्थितियों से परे चला जाए। सम्भवतया यह कहना एक सीमा तक अतिशयोक्ति होगी कि विश्व का प्रत्येक समाजशास्त्री तार्किक अपेक्षाओं से निर्मित होता है। कोई भी अपने सहयोगी समाजशास्त्री को यह दावा करने की अनुमती नहीं दे सकता कि उसके अध्ययन में इसलिए सत्यता सम्मिलित है क्योंकि उसका अध्ययन स्थानीय समस्याओं के साथ जुड़ा हुआ है। यह इसलिए सम्भव नहीं है क्योंकि उसके सहयोगी केवल उसके क्षेत्र के नहीं हैं उनका सम्बन्ध अफ्रीका, भारत, अमेरिका, चीन इत्यादि मूल के सहयोगियों से भी है। समाजशास्त्र इस दृष्टि से प्रत्यावर्तनीय है क्योंकि वह वि–केन्द्रित है। समाजशास्त्र या तो प्रत्यावर्तनीय है या फिर यह कुछ भी नहीं है।

कला के क्षेत्र में भी ऐसा ही हुआ है। अधिकाँशतः उन्नीसवीं शताब्दी में अमेरिका की पेन्टिंग्स यूरोप के प्रभाव से बिल्कुल पृथक थीं। इनमें गौरव का भाव था और यह प्रान्तीयता का प्रतिनिधित्व करती थीं। इनको आज भी समझने की कोशिश की जाती है। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है हालांकि इन्हें लोक एवं स्थानीयताओं से जोड़ा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी के उपरान्त संयुक्त राज्य अमेरिका का विकास हुआ और अनेक महत्वकांशी कलाकार यूरोप मुख्यतः पेरिस इत्यादि की यात्रा पर गए। बीसवीं शताब्दी के प्रथम पाँच दशकों में अमेरिका ने पेन्टिंग्स के क्षेत्र में महानगरीयता केन्द्रित स्थानीयता को नवीन रूप में प्रस्तुत किया। ये कृतियां न केवल विशिष्ट हैं अपितु फ्रांस में पाए जाने वाली पेन्टिगं सम्बन्धी कला के अनेक पक्षों को सम्मिलित करती हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त जब अमेरिका एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में स्थापति हुआ तब अमेरिकन पेन्टिंग की एक स्वतन्त्र पहचान बनी और अमेरिका की पेन्टिंग्सं विश्व इतिहास में स्वतन्त्र अस्मिता ग्रहण करने लगीं। ''न्यूयार्क स्कूल'' एक नवीन वैश्विक सौन्दर्यात्मकता को स्थापित करता है। हालांकि यह स्कूल अमेरिका के महानगरों में स्थापित है परन्तु इसके द्वारा प्रस्तुत अमूर्त अभिव्यक्तिवाद स्थानीयता को आंशिक रूप में प्रस्तुत करता है परन्तु उसमें देशज अमरीकी परम्पराओं का महत्वपूर्ण रूप में समावेश है। यह आधुनिक सौन्दर्यशास्त्र का एक विस्तार है जिसका प्रारम्भिक स्तर यूरोप में था और उसके उपरान्त पचास साल के विकास युग में उसमें जापानी, अफ्रीकन एवं पूर्व कोलम्बियन मूल निवासियों के सौन्दर्यात्मक पक्ष सम्मिलित हो गए।

ऐसा ही समाजशास्त्र के साथ होगा। हम सौभाग्य से एक ऐसे युग में रह रहे हैं जब गैर–पश्चिमी समाजों में हो रहा अत्यधिक आधुनिकीकरण पांच सौ वर्षों में पहली बार पश्चिम के प्रभुत्व को चुनौति दे रहा हैं। संयोगवश यह बहुस्तरीय आधुनिकता की प्रक्रिया न केवल पश्चिम के आर्थिक तन्त्र एवं सैन्य तन्त्र को चुनौति देने में सक्षम बनी है अपितु यह प्रभावी समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों एवं पद्धतियों को भी चुनौति दे रही है। जब चीन, भारत, कोरिया, साउथ अफ्रीका एवं रूस इत्यादि के सामाजिक विचारक अपने सैद्धान्तिक एवं पद्धतिशास्त्रीय पक्षों को व्यापक रूप में प्रस्तुत करेंगे तब वे केवल देशज निवासियों की भूमिका के साथ न जुड़ते हुए भी व्यापक सन्दर्भों को सामने लाएंगे। इनका योगदान उस वैश्विक बौद्धिकीकरण का पर्याय होगा जिसे स्वरूप ग्रहण करने में अनेक सदियां लगी हैं।

एक विशिष्ट प्रकार का समाजशास्त्र एक नई सार्वभौमिक इच्छा को निर्मित नहीं कर सकता। न तो समाजशास्त्र में और न ही कला में वास्तविक विशिष्टताएं विद्यमान होती हैं और न ही वे सही मायने में सार्वभौमिक हैं। ये तो एक समय में उत्पन्न हुए दो ध्रुवों के समन्वित रूप हैं। ■

> लातिन अमेरिका नियति का एक समुदाय?

पावलो हेन्रिक मार्टिन्स्, फैडरल यूनिवर्सिटी ऑफ पेरानाम्बुको, ब्राजील, एवं लातिन अमेरिकन सोशियोलोजिकल एसोशियेशन के अध्यक्ष

वैश्विकरण ने ज्ञान सृजन के नवीन क्षेत्रों को निर्मित किया है। ये क्षेत्र आधुनिकता के विषय में विमर्श के उन विशेषाधिकारवादी केन्द्रों को परिवर्तित कर रहे हैं जो यूरोपीय हैं और श्रम के परम्परागत बौद्धिक विभाजन को नियन्त्रित व निर्देशित करते हैं। अर्जुन अप्पादुराय जैसे कुछ लेखकों का मत है कि अब 'तृतीय विश्व' ऐसा 'तथ्यक–केन्द्र' (डाटामिल) नहीं रहा है जो 'उत्तर' को पहले प्राप्त था परिणामस्वरूप 'दक्षिण' के लिए विचारों के सृजक के रूप में 'उत्तर' का प्रभुत्व समाप्त हो चुका है। इस नयी दृष्टि के साथ वैश्वीकरण अब विभिन्न क्षेत्रों की बाहुल्यता के साथ उभरा है जिसमें जटिल भौगोलिक प्रक्रियाओं के माध्यम से उभरे समाजशास्त्रीय ज्ञान के क्षेत्र हैं। ये भौगोलिक प्रक्रियाएं राष्ट्रीय सीमाओं के परे जाती है हालांकि ज्ञान सृजन के केन्द्र के रूप में राष्ट्रों के महतव की उपेक्षा नहीं करतीं।

यदि लातिन अमेरिका के विषय में विशेष रूप से सोचें तो यह कहा जा सकता है कि ज्ञान का वैश्वीकरण अकादमिक समाज शास्त्र के ज्ञानमीमांसायी आधार में महत्व पूर्ण परिवर्तन कर रहा है। 1940 के दशक से 1980 के दशक के प्रथम चरण में आर्थिक एवं राजनीतिक आश्रितता पर आधारित वैश्वीकरण के प्रवक्ताओं से आलोचनात्मक विचार की दिशा निर्धारित हुई। उस अवधि की दो प्रमुख विचार प्रक्रियाओं में यह प्रभाव स्पष्टतया परिलक्षित होता है। पहली विचार प्रक्रिया संरचनावाद है जिसे लातिन

अमेरिका एवं केरेबियन के लिए बने आर्थिक आयोग जो 1948 में बना, से प्रेरणा मिली। इस संस्था को 'सी.इ.पी.ए.एल.' कहा जाता है। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य क्षेत्रीय आर्थिक विकास के विषय पर चर्चा करना है। अर्जेन्टीना के राउल प्रेबिश एवं ब्राजील के सेल्सो फुर्टाडो ऐसे दो अर्थशास्त्री हैं जो संरचनावाद के प्रमुख सिद्धान्ताकारों में सम्मिलित हैं। इन अर्थशास्त्रियों ने राज्य के महत्व का समर्थन किया क्योंकि इनके विचार में राज्य विकास का एक ऐसा अभिकरण है जो जनविरोधी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार जिसने कि कच्चे माल का उत्पादन करने वाले देशों के सामने संकट उत्पन्न किए हैं, से

>>

सम्बन्धित नियमों एवं कानूनों का प्रतिरोध कर सकता है। सी.इ.पी.ए.एल. ने विकास सम्बन्धी बहस में केन्द्र–परिधि के अन्तर को रेखांकित किया। एक दूसरा विचार आश्रितता सिद्धान्त से सम्बन्धित है जिसे थियोटोनियो डास सान्टोज, आर. एम. मारिनि, फर्नेन्डो हेनरिक कार्डोसो, एन्जो फेलेटो इत्यादि ने आगे बढ़ाया है। इन विचारकों ने केन्द्र–परिधि सम्बन्धों की सी.इ.पी.ए.एल. के द्वारा की गई आलोचनात्मक विवेचना को राजनीतिक पक्ष प्रदान किए हैं। इन विचारकों का तर्क है कि आश्रितता सिद्धान्त के पक्षों को राष्ट्रीय पूँजीपति, अन्तर्राष्ट्रीय पूंजीपति एवं अन्य सामान्य वर्गों के मध्य विशिष्ट प्रकार के सम्बन्धों को निर्मित करके न केवल चुनौति दी जा सकती है बल्कि इनकी कमियों को भी दूर किया जा सकता है।

हाल के वर्षों में विशेषतः 1980 के दशक से वर्तमान तक समाजशास्त्र ने वैश्वीकरण से सम्बन्धित अनेक विविधतामूलक बोध विकसित किए हैं। एक तरफ वे नव्य उदारवादी हैं जिनका तर्क है कि आर्थिक वैश्वीकरण ''केन्द्र'' एवं ''परिधि'' के मध्य के अन्तर को समाप्त करेगा। यह राष्ट्र राज्यों को अथवा राष्ट्रीय समाजों को ह्रास की तरफ ले जाएगा और आर्थिक, वित्तीय, प्रोद्योगिकीय एवं साँस्कृतिक समानताओं को मजबूती देगा। समानता/समरूपता के इस विमर्श में आर्थिक सिद्धान्तों का महत्व पूर्ण प्रभाव है। इस कारण समाजशास्त्र इस विमर्श में राजनीतिक एवं साँस्कृतिक विभेदों तथा बड़े पैमाने पर उभरे वैश्विक उपभोग के तत्वों की उपेक्षा करता है। नव्य उदारवादियों के लिए आश्रितता का विमर्श महत्वहीन हो चुका है और यह सिर्फ अतीत की बात रह गई है। दूसरी ओर उत्तर–आश्रितता से सम्बन्धित सिद्धान्तकारों का दावा है कि आश्रिततामूलक सम्बन्ध पुनर्गठित हुए हैं। अब इन्हें ज्ञान एवं शक्ति की ''औपनिवेशिकता'' तथा विश्व–व्यवस्था में ''धनाढ्य समाजों'' एवं ''निर्धन समाजों'' के मध्य अन्तरविरोधों पर पुनर्विचार के रूप में देखा जा सकता है। ''औपनिवेशिकता'' से सम्बद्ध सिद्धान्तकार यह महसूस करते हैं कि ''दक्षिणी'' समाजों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, साँस्कृतिक एवं धार्मिक विशिष्टों को समझे बिना यूरोप केन्द्रित सिद्धान्तों को स्वीकार करना असम्भव है।

"आश्रितता आधारित सम्बन्धों को 'उपनिवेशिता' के रुप में पुर्नसंगठित किया जा रहा है।"

लाटिन अमेरिकन देशों में उभरने वाली यह द्वितीय ''उत्तर औपनिवेशिक'' प्रवृत्ति की विचार प्रक्रिया इस तथ्य को मान्यता देती है कि उपनिवेशवाद एवं उपनिवेशवाद का विरोध एक ऐतिहासिक द्वन्द्व है और वैश्विक पैमाने पर नियन्त्रण एवं प्रभुत्व के नवीन साधन प्रयुक्त होने लगे हैं।

लैटिन अमेरिका में पनपी उत्तर औपनिवेशिक सिद्धान्त व्यवस्था ''उपनिवेश–वाद'' एवं ''उपनिवेशवाद विरोध'' को केवल पारम्परिकता/देशज की ऐतिहासिक विरासत के रूप में स्वीकार नहीं करती। उनका यह भी मत है कि ये अभिव्यक्तियां संज्ञानात्मक एवं भाषायी रणनीति का भी भाग हैं जिसे बावेन्चुरा ड साउसा सान्टोज एवं अन्य ने ''सम्पर्क के क्षेत्र'' (जोन ऑफ कॉन्टेक्ट) की संज्ञा दी है। इसके आधार पर विश्व व्यवस्था के अन्तर्गत पनपे विविधतामूलक अनुभवों एवं विचारों को समझा जा सकता है। उपनिवेशवाद एवं उपनिवेशवाद का विरोध वैश्वीकरण की प्रक्रिया के सन्दर्भ में दो प्रकार की स्थितियों को उत्पन्न करते हैं। ये सूचना एवं छवि के पक्षों को व्यापक रूप में पहुंचाते हैं और इसके साथ ही उत्तर एवं दक्षिण के विचारों को व्यापकता के साथ प्रेषित करते हैं। इन विचारकों की दृष्टि में वैश्विक संगठनों एवं वैश्विक आन्दोलनों में सक्रिय संचरण की जटिल प्रक्रिया विद्यमान है जिसे अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे आई. एस. ए. एवं ए.एल.ए.एस. (लैटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोसिएशन) के रूप में देखा जा सकता है। ये सन्दर्भ स्पष्ट करते हैं कि सामाजिक जीवन से जुड़े राजनीतिक, नैतिक, सौन्दर्यात्मक, आचार संहितामूलक एवं भाषाई तत्व ज्ञान सृजन के विभिन्न केन्द्रों के मध्य विनिमय के नवीन स्वरूपों को विस्तार देते हैं। लैटिन अमेरिका के अनेक लेखकों जैसे कासानोवा, क्विजानों, लैण्डर इत्यादि की प्रतिष्ठा इस प्रकार से सिद्धान्त विवेचन के क्षेत्र में वृद्धि की तरफ है। यह वृद्धि ठीक उसी प्रकार है जैसे उत्तर में इमेन्युअल वालर्सट्रियन की है। इन विचारकों के कारण उपनिवेशवाद के नवीन सिद्धान्त महत्व प्राप्त कर रहे हैं।

निष्कर्षतः हमें यह याद रखना चाहिए कि उत्तर औपनिवेशिक समाज वैश्वीकरण की औपनिवेशिन प्रक्रिया के अन्तर्गत साँस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में समरूपीय चरित्र के नहीं हैं। हमारा यह आग्रह है कि लातिन अमेरिका में अकादमिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में विद्यमान अनेक विशिष्टताओं में से एक यह भी है कि इस क्षेत्र के अनेक बुद्धिजीवियों की यह आकांक्षा है कि लातिन अमेरिका एक सम्भावित समुदाय के रूप में इस प्रकार उभरे कि वह अपनी नियति को सुनिश्चित कर सके। यदि हम इस परिप्रेक्ष्य को स्थान दें तो यह समझ लेना चाहिए कि लातिन अमेरिका की अभिव्यक्ति प्रतीकात्मक रूप से गलत है क्योंकि इससे यह महसूस होता है कि उपनिवेशवाद के परिणामस्वरूप यह उस भाषाई समुदाय को व्यक्त करती है जिसे ''लैटिनोज'' कहा जाता है। यह शब्द ऐतिहासिक महत्व के अनेक समुदायों जैसे देशज लोगों, अफ्रीकी मूल के पूर्व दासों, गैर लातिन यूरोपीय प्रवासियों एवं एशियाई मूल के लोगों इत्यादि को पृथक कर देता है। लातिन अमेरिका को नियति के सम्भावित समुदाय के रूप में समझना एक ऐसा काल्पनिक विचार है जो धीरे–धीरे न केवल शक्तिशाली हो रहा है अपितु उस अकादमिक विनिमय को प्रेरित कर रहा है जो क्षेत्रीय समाजशास्त्र को एकजुटता प्रदान करती है। ■

> उत्तर–सोवियत समाजशास्त्र की शोचनीय स्थिति

विक्टर वखशेट्यान, मॉस्को स्कूल ऑफ सोशल एवं इकोनोमिक साइन्सेज, रूस

2008 की तृतीय अखिल–रुसी समाजशास्त्रीय कॉंग्रेस में सोवियत काल की गूँज।

पिछले कुछ वर्षों में रूसी समाजशास्त्र का बौद्धिक जगत युद्ध–स्थल बन गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि आज हर तीन में से दो समाजशास्त्रीय लेख, समाजशास्त्र स्वयं के बारे में हैं : समाजशास्त्र का समाजशास्त्र चाहे मुख्यधारा अनुसंधान का हिस्सा न भी बने, परन्तु कम से कम सार्वजनिक बहस के लिए पसंदीदा विषय है। सोवियत संघ का विध्वंस और ''सामाजिक रूपांतरण के अध्ययन की आवश्यकता'' अब सामाजिक विज्ञानों में अध्ययनों के केवल वैध आधार नहीं है। अब जबकि सामाजिक विज्ञानों का पोस्ट–सोवियत बचपने का अंत हो गया है, एक लगभग जुनूनी, अति–रिफ्लैक्सिविटी ने दशकों की गैर–चिंतनशील सोच को बदल दिया है।

> नव–सोवियत भाषा

हाल ही में हुए युद्धों के पूर्व की समाजशास्त्रीय भाषा के परिदृश्य पर एक नजर डालना बुद्धिमानी होगी। 2008 की तीसरी अखिल–रूसी समाजशास्त्रीय कांग्रेस शुरूआत के लिये उचित रहेगी। इस कांग्रेस ने नव–सोवियत भाषा की सघन शैलीगत शून्यता का क्रिस्टीलकरण किया : ''समाज के स्थिर विकास की जरूरतों के लिए उच्च गुणवत्ता वाले समाजशास्त्रीय अनुसंधान की आवश्यकता हैं,'' या ''(...) आज समाजशास्त्र का कार्य समाज की सामाजिक, शारीरिक, आर्थिक, उर्जा, तालमेल और अन्य प्रकार की सुरक्षा की माँग का अध्ययन करना है।'' उदाहरण के लिए 2500 कांग्रेस प्रतिभागियों से किये गये सर्वेक्षण के नतीजों को देखते हैं। यह मालूम हुआ कि 73% उत्तरदाता (करीबन एक–चौथाई प्रतिभागी) एक विदेशी भाषा में शब्दकोष के साथ कुशल थे; वर्ष 2000 के पश्चात 40% सरकार में और इतने ही व्यापार में कार्यरत थे; 66% मुख्य पत्रिका Socis पढ़ते थे; सर्वाधिक लोकप्रिय पाठ्यपुस्तक वी. डोबरेन्कोव एवं ए. क्रावचेन्को

>>

द्वारा संपादित पुस्तक और विदेशी लेखकों में सर्वाधिक उल्लेखित जिगमण्ट बाउमेन और पियोटर स्टोम्पका थे।

समाजशास्त्र की परिभाषा पूछने पर सबसे लोकप्रिय परिभाषा ''समाजशास्त्र समाज का विज्ञान है'' थी। समाज क्या है पूछने पर अधिकांश ने जवाब नहीं दिया और जिन्होंने दिया उनकी जीतने वाली परिभाषा ''समाज एक सोसियम है'' थी। इस तरह की पुनरूक्तियाँ परम्परावादियों की सीमेन्टिक्स है जिनके लिए समाजशास्त्र राज्य के लिए मूल्यवान सामाजिक प्रौद्योगिकी है। यदि सिद्धान्त की जरूरत है तो वह रूसी सिद्धान्त ही होना चाहिए जो राष्ट्रीय चिंताओं को सम्बोधित करे। कांगेस के दौरान कुछ उदार समाजशास्त्रियों पर आरोप लगे कि उन्हें पश्चिम द्वारा ''ओरेंज क्रांति'' भड़काने के लिए धन दिया जा रहा है। कांग्रेस ने यह दर्शा दिया कि एक समेकित, नव सोवियत, समाजशास्त्रीय भाषा अपने विशिष्ट संकेतों, समझ तक पहुँचने के तंत्र, साझा स्वयं सिद्ध तथ्य और पुनरूक्ति के तर्क के साथ गठन की प्रक्रिया में थी।

> सोवियत–विरोधी भाषा

अब, जरा समाजशास्त्र की वैकल्पिक भाषाओं की तरफ चलते हैं। यहाँ, 18 वर्षों से सामाजिक विज्ञान की सबसे विशिष्ट और नियमित घटना, रशियन पाथवेज संगोष्टी की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसकी प्रकाशित सामग्री (1993–2008) से देखा जा सकता है कि कैसे सोवियत विरोधी भाषा के संकेत (कोड़) और रूपक और अधिक रसायनीय हो गये है। अतः रूपांतरण के अर्थ को बदलते देखना; जैसे अवधारणा से रूपक के रूप में विकास जो किसी का भी वर्णन कर सकता है, बहुत ही रोचक है। नव–सोवियत भाषा के समान ही, इसका भी अपने स्वयंसिद्ध होने का दावा है जो सभी द्वारा स्वीकृत है और जिन्हें सबूत की आवश्यकता नहीं है। पहला, यह सोवियत समाजशास्त्र की कठोर भाषा व उसके वारिस परम्परागत द्विअर्थी नव–सोवियत भाषा के प्रति विवेचनात्मक/आलोचनात्मक रूख अपनाता है: दूसरा, यह स्पष्ट रूप से विदित आदर्शों को अपनाता है : समाजशास्त्र को प्रगति में मदद करनी चाहिए – एक नागरिक समाज, लोकतंत्रीकरण और उदारीकरण। तीसरा, यह आनुभाविक कार्य अर्थात् ''रूसी समाज की वास्तविक समस्याओं'' के कुशल विवरण के साथ सोशियाग्राफी के महत्व पर बल देता है। 'समाज की वास्तविक समस्याओं' पर लगातार जोर समाज की अपनी अनूठी समस्याओं और रोगों के साथ वस्तुनिष्ठ अस्तित्व के बारे में सरल यथार्थवाद दर्शाता है जिससे अनु–संधानकर्ताओं पर एजेण्डा थोप दिया जाता है। गेलिलियो, जिसने यह माना कि प्रकृति की पुस्तक गणितीय भाषा में लिखी गई है, के समान ही सरल यथार्थवादी यह मानते हैं कि समाज की पुस्तक समाजशास्त्र की भाषा और उससे भी आगे, उनकी समाजशास्त्र की भाषा में लिखी गई है।

रूसी पाथवेज का अर्थविज्ञान अपने पन्द्रह वर्षों के प्रकाशन में काफी बदल गया है। 1990 के दशक के मध्य में रूस के भविष्य को लेकर तूफानी बहस से शुरू, रूसी पाथवेज ने 1990 के दशक के अंत तक अपने अतिवादी अभियान को शासन के प्रति ''उदार आलोचना'' से खो दिया। फिर भी, इसके आलंकारिक उद्धविकास के बावजूद, अन्तर्निहित विवरण अपरिवर्तित हैं, अर्थात् ''यह वह नहीं है जो इसे होना चाहिए'', 1990 के दशक में ''यह वो नहीं जो अभी तक इसे होना चाहिए'', और 2000 के दशक में ''यह जो इसे होना चाहिए से बिल्कुल भिन्न है'', जैसा प्रतीत होता है।

> एक पोस्ट–सोवियत सम्मिलन (कनवर्जेन्स)

जिस प्रकार पुनरूक्ति (tautology) नव–सोवियत भाषाओं का मुख्य सूत्र है उसी प्रकार सोवियत–विरोधी भाषाओं का 'क्या है' और ''क्या होना चाहिए'' के बीच की तरफ ध्यान आकर्षित करते हुए विरोधाभास मुख्य सूत्र है। मेरी मुख्य दलील है कि दोनों भाषाओं में कोई अंतर नहीं है – दोनों ही पूर्णतया सोवियत हैं।

1. संशय की संस्कृति (Culture of Suspicion): दोनों अभिव्यक्तियों के प्रकार इस धारणा को मानते हैं कि ''किसी भी ज्ञान के पीछे राजनैतिक हित हैं''। जो आप कहते हैं वह वो नहीं है जो आप सोचते हैं और जो भाषा आप इस्तेमाल करते हैं वह आपके राजनीतिक हितों को प्रतिबिम्बित करती है। अतः किसी भी सिद्धान्त को उसके ''परिणाम'' अर्थात् वह क्या प्राप्त करना चाहता है, से देखा जाता है।

2. वचनबद्धता (Engagement) : नव–सोवियत भाषा के अन्तर्गत समाजशास्त्र राज्य पर निर्भर है और अनुसंधान सामाजिक प्रौद्योगिकी द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है, जबकि सोवियत–विरोधी अर्थ विज्ञानी यह मानते हैं कि विज्ञान प्रगति के हितों को पूरा करता है – उल्लेखनीय है कि प्रगति के हित न कि स्वयं विज्ञान के। यहाँ ''ज्ञान के लिए ज्ञान'' का कोई मत नहीं है, न ही वेबर का विचार कि विज्ञान अपने ही मूल्यों में स्थित होता है, जहाँ ज्ञान अपनी प्रेरणा स्वयं प्रस्तुत करता है, का मत है। दोनों ही प्रकार की पोस्ट–सोवियत सोच में ज्ञान को गंभीर समस्याओं के हल की तरफ झुका होना चाहिए।

3. सैद्धान्तिक राष्ट्रवाद (Theoretical Nationalism): पश्चिम की किसी भी सैद्धान्तिक विरासत के आयात पर प्रतिबंध, जब तक कि वह हमारी जमीन में पहले से स्थित न हो। 'जमीन' शब्द निश्चित रूप से तीसरी समाजशास्त्रीय कांग्रेस की भाषा से सम्बन्धित है। रूसी पाथवेज की भाषा का एक अन्य रूपक है – ''होमलेण्ड ऐसपन्स''। अतः आयातित सैद्धान्तिक विचारों के प्रति विरक्ति नव सोवियत और सोवियत–विरोधी विवरण की पद्धतियों के समान विभाजक हैं।

4. रिफ्लैक्सिविटी का अभाव (Absence of Reflexivity): कुछ ही वर्षों पूर्व दोनों 'परम्परावादियों' और 'उदारवादियों' ने पद्धतिशास्त्रीय रिफ्लैक्सिविटी को समान रूप से अस्वीकार किया था। उन्होंने उसे ''उत्तर–आधुनिक विचलन'' अर्थात् ''यथार्थ को वास्तव में जैसा है'' के अध्ययन के पवित्र कर्तव्य से विचलन करने के प्रयास के रूप में देखा। आज यह स्थिति पूर्णतया दोनों पक्षों के रिफ्लैक्सिविटी में डूबने के कारण परिवर्तित हो गई है। यह भी रूसी समाजशास्त्र के विकास को निरूप्राय बनाने की अति–प्रतिक्रिया है।

निश्चित रूप से ये दोनो सिमेन्टिक्स, पुनरूक्ति और विरोधाभासी, पूरे पोस्ट–सोवियत विस्तार की व्याख्या नहीं करते हैं। कई और अन्य भाषाएँ भी थीं परन्तु वे सैद्धान्तिक ''मुख्य धारा'' के बाहर या फिर बेल्टलाइन (उदाहरण के लिए सेंट पीटरसबर्ग में) से बहुत दूर विकसित हुई। जहाँ व्यापक विश्व में सामाजिक विश्लेषण, फ्रेम विश्लेषण, प्रघटना शास्त्र और लोकविधि विज्ञान के प्रवक्ता वैज्ञानिक लाभ के लिए संघर्ष करते हैं, रूसी समाजशास्त्र में परम्परावादी और उदारवादी एक दूसरे के खिलाफ लामबंद हैं जिसके परिणामस्वरूप समाजशास्त्रीय बातचीत राजनीति निर्धारित पत्रकारिता के रूप में दिखने लगी है। ■

> न्यूजीलैण्ड में माओरी समाजशास्त्र

ट्रेसी मेक्इन्टोश, यूनिवर्सिटी ऑफ आकलैण्ड, न्यूजीलैण्ड

न्यूजीलैण्ड अधिवासी नागरिकों का राज्य है। इसका एक औपनिवेशिक अतीत है जिसके साथ यह देश अनवरत् रूप से संघर्षरत है और वह होना भी चाहिए। इसका अर्थ यह है कि न्यूजीलैण्ड में समाजशास्त्र आलोचनात्मक रूप में देशज (माओरी) एव गैर–देशज जनसंख्या, जो कि न्यूजीलैण्ड में निवास करती है; के विशेषाधिकारों एवं सम्बद्ध निषेधों/समस्याओं की उपस्थिति एवं उनकी पुनः प्रस्तुति को पर्याप्त महत्व प्रदान करता है। एक माओरी समाजशास्त्री के रूप में मेरा विश्वास है कि समाजशास्त्रियों को अन्तःसम्बद्ध सांस्कृतिक (क्रास कल्चरल) अनुसंधानों पर सामाजिक न्याय के मुद्दे के साथ ध्यान देने की आवश्यकता है। इस क्षेत्र में उनका योगदान अत्यन्त आवश्यक है। यह मैं अपने निजी एवं अकादमिक अनुभवों जो कि माओरी–केन्द्रित अनुसंधानों से जुड़े हैं; के आधार पर कह रहा हूँ। न्यूजीलैण्ड में वरिष्ठ एवं युवा (उभर रहे) माओरी समाज–शास्त्रियों की सीमित संख्या है पर ऐसे गैर–देशज समाजशास्त्रियों की संख्या अधिक है जिनके अनुसंधान माओरी अनुभवों पर केन्द्रित हैं।

माओरी का औपनिवेशीकरण के प्रति ऐतिहासिक अनुभव तथा सीमान्तीकरण वंचन एवं आंशिक उपलब्धता/कमी के समकालीन यथार्थ यह दर्शाते हैं कि माओरी नृवंशीय अस्मिता का क्षेत्र संघर्ष एवं प्रतिरोध का भाग है। एक भौगोलिक क्षेत्र पर प्रारम्भ से निवास करने वाले लोग तनगाता वहनुआ (Tangata Whenua) के रूप में माओरी अपनी सामाजिक स्थितियों को न्यूजीलैण्ड के समाज में गम्भीर संघर्ष/विवाद के रूप में पाते हैं। प्रत्येक नकारात्मक सामाजिक संकेतकों में यह जनसंख्या व्यापक रूप से प्रतिनिधित्व के रूप में उपस्थित है। इस जनसंख्या को उन राजनीतिक एवं लोकप्रिय वक्तव्यों का उत्तर देना होता है जिनमें इस जनसंख्या की आंशिक उपलब्धियों को बढ़ा चढ़ा कर प्रसारित किया जाता है। देशज जनसंख्या की इन उपलब्धियों के आधार पर उन्हें अधिकार प्राप्त देशज जनसंख्या के रूप में उभारा जाता है। माओरी का राजनीतिक संघर्ष उनकी भूमि एवं संसाधनों के विषय में भी है जिनसे अतीत में उन्हें बेदखल कर दिया गया था (यह अतीत हाल ही का है)। उनके अनवरत संघर्ष के कारण कुछ मुद्दों पर उनको सफलता भी मिली है। इस सफलता से यह सुनिश्चित होता है कि उनके जीवन का प्रत्येक पक्ष न केवल राजनीतिक है अपितु जॉच पड़ताल से भी सम्बद्ध है।

माओरी एवं गैर–माओरी के मध्य व्यापक असमानता है, का तथ्य बिल्कुल स्पष्ट है। माओरी की स्थितियों से सम्बन्धित शोध जो कि गहन प्रकृति के हैं, दर्शाते हैं कि माओरी जन्म से ही अनेक निर्योग्यताओं एवं भेदभाव के शिकार हैं। माओरी शिशु की गैर–माओरी शिशु की तुलना में मृत्यु दर अधिक है। प्रारम्भिक बाल शिक्षा के क्षेत्र में गैर–माओरी बच्चों की सहभागिता कम है। विद्यालयों में माओरी विद्यार्थियों का निलम्बन एवं उनके प्रवेश निरस्त करने की संख्या तुलनात्मक रूप से अधिक है। परिणाम स्वरूप इनके शैक्षणिक उपलब्धियों के अवसर कम हो जाते हैं और बाल अपराधी बनने की उनकी सम्भावनाएं अधिक हो जाती हैं। गैर–माओरी की तुलना में माओरी में बेकारी की दर अधिक है और तुलनात्मक रूप से उनकी आय भी बहुत कम है। माओरी जनसंख्या को सरकारी अनुदान की अधिक आवश्यकता है, साथ ही वे सरकारी सुविधाओं पर आश्रित हैं। अधिकांश माओरी जनसंख्या गैर–माओरी की तुलना में कम सुविधाओं वाले मकानों में निवास करते हैं तथा उनकी मानसिक एवं शारीरिक/स्वास्थ्य सम्बन्धी स्थिति भी तुलनात्मक रूप से भिन्न है।

माओरी के साथ भेदभाव एवं उत्पीड़न आपराधिक न्याय व्यवस्था में भी साफ परिलक्षित होता है। यह जनसंख्या अपराधियों की संख्या की दृष्टि से भी अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त है वहीं क्षतिग्रस्त व्यक्तियों की संख्या में भी इनका प्रतिनिधित्व अधिक है। न्यूजीलैण्ड की कुल जनसंख्या का 15 प्रतिशत माओरी से सम्बद्ध है पर कारागार में बन्द अपराधियों का 50 प्रतिात से अधिक माओरी हैं। अनेक माओरी लोगों का जीवन बेकारी, बीमारी, मानसिक व्याधि, निर्धनता एवं जेल की स्थितियों में ही बीतता है। 1970 के दशक से माओरी संस्कृति की प्रतिष्ठा एवं वैधता तेजी से स्थापित होनी लगी। न्यूजीलैण्ड के समाज में माओरी संस्कृति एवं भाषा को सम्मान प्राप्त होने लगा है पर जहाँ एक तरफ अन्य सामाजिक असमानताओं का समधान करने में सफलता मिली है वहीं माओरी के बीच अपना नवजागरण उनकी समस्याओं के समाधान में केवल आंशिक सफलता ही उत्पन्न करा सका।

इन संवेदनशील मुद्दों पर आवाज उठाने की प्रक्रिया में समाजशास्त्रीय अनुसंधान महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं। अनुसंधान की शक्ति उन अनेक परियोजनाओं में स्पष्टतया परिलक्षित होती है जहाँ एक टीम के सदस्य अनेक बहुस्तरीय अनुसंधान परम्पराओं को संचालित करते हैं और इन अनुसंधानों के निष्कर्षों को संचारित करते हैं। यहाँ हमारा कथन शक्ति संरचना के महत्व को नकारना नहीं है। सभी अनुसंधान शक्ति (अथवा शक्तिहीन) की गत्यात्मकता से निर्देशित व प्रभावित होते हैं। अनुसंधान प्रक्रिया में रूपरेखा के प्रारम्भिक चरण में निवेश, सहभागी सदस्यों की सम्बद्धता, अनुसंधान निष्कर्षों के क्रियान्वचन एवं निष्कर्षों का व्यापक रूप में सम्प्रेषण इत्यादि पक्ष शक्ति सम्बन्धों द्वारा सुनिश्चित होते हैं। हम यह कह सकते हैं कि सामाजिक न्याय के परिणामों पर बल से उन चुनौतियों एवं अवसरों की तरफ ध्यान जाता है जिन्हें अनुसंधानकर्ता एवं अनुसंधान सहभागी व्यवस्थित रूप से समझने की कोशिश करते हैं।

निष्कर्ष रूप में, मैं यह कह सकता हूँ कि माओरी केन्द्रित अनुसंधान परिवेश में बहु–सांस्कृतिक (क्रास कल्चरल) मुद्दों पर महत्वपूर्ण रूप से बल देने की जरूरत है। वर्तमान परिवेश में ऐसे अनेक अनुसंधान हैं जो प्रारम्भ से लेकर अन्त तक माओरी से ही निर्देशित हैं पर इसके साथ ही गैर माओरी अनुसंधानकर्ता भी संवेदनशील भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं विशेषतः तब जबकि वे पारम्परिक अनुसंधान नियन्त्रणों से स्वेच्छापूर्वक मुक्त हों, एवं माओरी निर्देशित संदर्भों के अन्तर्गत कार्य करें। हाल तक मुख्य धारा के अनुसंधानों का लाभ माओरी समुदायों को नहीं मिला है। मुख्यधारा के ये अनुसंधान 'घाटे' की दृष्टि को सामान्यतः महत्व देते हैं। आज ये समुदाय विभिन्न संगठनों के समझौतों से उभरे बाहुल्यता मूलक अनुसंधानों को मान्यता देते हैं और इन अनुसंधानों का लाभ उठाते हैं। हालांकि ऐसे भी विचारक व अनुसंधान कर्ता हैं जो माओरी के साथ मिल कर माओरी के लिए माओरी अनुसंधान को महत्व देते हैं। दमन के शिकार समूहों को अनौपचारिक रूप में प्रभुत्वशाली समूहों का अध्ययन करना चाहिए ताकि इन समूहों की जीवनचर्या को जाना जा सके और प्रभुत्व के केन्द्रों की कार्य–कारणता मूलक समझ को विकसित किया जा सके। हम पारस्परिक सहयोग व समन्वय के साथ गैर–देशज अनुसंधानकर्ताओं को यह बता सकते हैं कि हम अपने में क्या हैं पर इस के साथ ही सम्भवतया हम उन्हें यह भी समझा सकते हैं कि वे अपने आप में क्या हैं। ■

> उत्तर–सोवियत अर्मेनिया में

'नवीन निर्धनता' पर एक टिप्पणी

जवोर्ग पोगोस्यान, निदेशक, इन्स्टीट्यूट ऑफ फिलासॅफी, सोशियोलोजी एण्ड लॉ ऑफ दि अर्मेनियन नेशनल एकेडमी ऑफ साइन्सेज एवं अर्मेनियन सोशियोलोजिकल एसोसिएशन के अध्यक्ष

बीसवीं शताब्दी के अन्त में हुआ सामाजिक रूपान्तरण जो कि सोवियत संघ के विघटन के उपरान्त हुआ ने एक नए ऐतिहासिक युग को जन्म दिया है। उत्तर–सोवियत देशों में सामाजिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में अनेक गम्भीर विकासमूलक कठिनाइयां उभर कर आई हैं। ''आधुनिकीकरण की वापसी'' एवं वि–औद्योगिकीकरण वे चरण हैं जो कि उत्तर–सोवियत विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं। आधुनिकीकरण के प्रारूपों से नृवंशयी–सॉंस्कृतिक प्रक्रियाओं के बर्हिकरण ने इन समस्याओं को कहीं न कहीं सम्मिलित किया है।

अर्मेनिया में आधुनिकीकरण की वापसी ने, जो कि विऔद्योगीकरण को गहन बनाती है, समूचे देश को आर्थिक क्रियाओं विशेषतः कृषि के क्षेत्र में अराजकता की स्थिति तक पहुंचा दिया है (पोगोस्यान, 2005)। उत्तर–सोवियत निजीकरण के परिणामस्वरूप अल्पसंख्या में विद्यमान निजी स्वामियों के पास अधिकांश सम्पत्ति का संकेन्द्रण हुआ है। इसके परिणामस्वरूप चरम स्तर की निर्धनता एवं मध्य वर्ग के अल्प विकास की प्रक्रियाएँ उभर कर आई हैं (पोगोस्यान, 2003)।

आधुनिक अर्मेनियन समाज में हुआ रूपान्तरण, जो कि अभी पूर्णता प्राप्त नहीं कर पाया है, ने अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तनों को उत्पन्न किया है। एक राष्ट्रव्यापी समाशास्त्रीय सर्वेक्षण के आधार पर हम निम्नलिखित प्रारूप की चर्चा कर सकते हैं (पोगोस्यान, 2005) :

– सर्वोच्च स्तृत : राजनीतिक एवं आर्थिक अभिजन बड़ी मात्रा में सम्पत्ति के स्वामी, अल्पतन्त्र (जनसंख्या का पांच से सात प्रतिशत)

– मध्य स्तृत : लघु व्यापारी एवं उद्यमी, उच्च वेतन प्राप्त पेशेवर समूह, राज्य से सम्बन्धित कर्मी एवं प्रबन्धक (दस से बारह प्रतिशत)

– बहुमत से निर्मित स्तृत : कार्यालयी श्रमिक, सेवा श्रमिक, कृषक, बुद्धिजीवी, पेंशन प्राप्त लोग, छोटे व्यापारी एवं वे लोग जिन्हें अस्थायी रूप से बेकारी का सामना करना पड़ता है (पैंसठ प्रतिशत)

– सामाजिक दृष्टि से निम्न स्तृत : गृहविहीन, स्थाई रूप से बेकार, वेश्यावृत्ति से सम्बन्धित लोग तथा वे लोग जिन्होंने सामाजिक सन्दर्भ में 'खोया' है।

अर्मेनियन समाज बहुस्तरीय बन गया है। इन सभी स्तृतों में जीवन स्तर के आधार पर विभाजन एवं विभेद किया जा सकता है। जनसंख्या के एक बड़े क्षेत्र का सीमान्तीकरण प्रारम्भ हुआ है जो कि मुख्य रूप से बेकारी का परिणाम है। यह पूर्व की आर्थिक व्यवस्था के विध्वंस एवं सुधारों का परिणाम है जिसको मैंने ''नवीन निर्धनता'' की संज्ञा दी है। यह स्थिति वंशानुगत अथवा विरासत में मिली संस्कृति के विघटन का परिणाम नहीं है। इस प्रकार की निर्धनता सोवियत दौर में अस्तित्व में नहीं थी।

यह नवीन निर्धनता तृतीय विश्व के देशों में व्यापक स्तर पर पाई जाने वाली निर्धनता के समकक्ष नहीं है। इन देशों में संसाधनों का अभाव, अशिक्षा, बाल मृत्यु की उच्च दर एवं अपर्याप्त सार्वजनिक सफाई व्यवस्था की विशेषताओं से निर्मित होती है। उत्तर–सोवियत ''नवीन निर्धनता'' की प्रघटना का इन स्थितियों से कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि उत्तर–सोवियत देशों में शिक्षा का उच्च स्तर, स्वास्थ्य संरक्षण की सुस्थापित व्यवस्था एवं जीवन यापन की अच्छी स्थितियाँ विद्यमान हैं। ''नवीन निर्धनता'' उन व्यक्तियों को प्रभावित करती है जो अतीत में अपने जीवन यापन से सन्तुष्ट थे जैसे श्रमिक, कार्यालयकर्मी, बुद्धि जीवी, पेंशन प्राप्त करने वाले लोग एवं गृह प्रबन्धन का कार्य करने वाले लोग (हाउसकीपर)। वैश्विक वित्तीय संकट के कारण इस तरह की ''नवीन निर्धनता'' यूरोपीय यूनियन के कुछ देशों एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में एक स्तर पर नजर आने लगी है।

तृतीय विश्व के देशों में निर्धनता को नियन्त्रित करने के लिए जो परम्परागत रणनीतियाँ अपनाई जा रही हैं वे नवीन निर्धनता के नियन्त्रण के लिए प्रयुक्त नहीं हो सकतीं। हमें इसके लिए नवीन अव–धारणाओं एवं ऐसी नवीन रणनीतियों को निर्मित करना होगा जो प्रत्येक देश की नृवंशीय एवं सांस्कृतिक विशिष्टताओं पर केन्द्रित हों। अर्मेनिया के सन्दर्भ में जहां आर्थिक सक्रियता शिक्षित जनसंख्या एवं अर्मेनियन अप्रवासियों के द्वारा व्यापक स्तर पर निवेश की सम्भावनाओं के अवसर हों, नवीन निर्धनता को लघु एवं मध्यम स्तर के व्यापार एवं व्यवसाय का तीव्र विकास कर नियन्त्रित किया जा सकता है। ■

सन्दर्भ पुस्तकें :

पोगोस्यान, जी. 2003 ''अर्मेनियन सोसाइटी इन ट्रांसफोर्मेशन'' यरेवन, अर्मेनिया : लुसावेट्स (रशियन)

पोगोस्यान, जी. 2005 ''करेन्ट अर्मेनियन सोसाइटी : पीक्यूलेरिटीज ऑफ ट्रांसफोर्मेशन'' मॉस्को, एकेडेमिया (रशियन)

> करण्ट सोशियोलॉजी की जीवन्तता

जेनिफर प्लाट, ससेक्स विश्वविद्यालय, यू. के. एवं आई.एस.ए. उपाध्यक्ष, प्रकाशन, 2010–2014 और इलोइजा मार्टिन, फेडरल यूनिवर्सिटी ऑफ रियो दि जनेरियो, ब्राजील एवं संपादक, करण्ट सोशियोलॉजी।

CURRENT SOCIOLOGY
LA SOCIOLOGIE CONTEMPORAINE
VOLUME IX, No. 1, 1960
COMPARATIVE SOCIAL MOBILITY
A trend report and bibliography
LA MOBILITÉ SOCIALE COMPARÉE
Tendances actuelles de la recherche et bibliographie
BASIL BLACKWELL

करण्ट सोशियोलॉजी की व्यापक रुप से उद्धृत एक प्रारम्भिक ट्रेण्ड रिर्पोट

करण्ट सोशियोलॉजी (Current Sociology) समाजशास्त्रीय शोध– पत्रिकाओं में काफी पुरानी है। इस वर्ष वह अपनी साठवीं वर्षगांठ मना रही है। इसका विकास 1950 के दशक से समाजशास्त्र की अंतर्राष्ट्रीय तरक्की के बारे में काफी कुछ जानकारी देता है। आई. एस. ए. की स्थापना यूनेस्को के आग्रह पर हुई थी। अतः यह शोध पत्रिका भी यूनेस्को की प्रस्तुति के रूप में प्रारम्भ की गई। 1957 में टॉम बोटोमोर के आई. एस. ए. के कार्यकारी सचिव बनने के पश्चात उन्होंने इस का संपादक पद संभाल लिया। (1973 में मार्गेट आर्चर इसकी पहली संपादक बनी जो आई. एस. ए. में किसी अन्य पद पर आसीन नहीं थी।) शुरूआती समय में इसका उद्देश्य समाजशास्त्र की नवीनतम प्रकाशित पुस्तकों की सामान्य ग्रंथ सूची को उपलब्ध करा अंतर्राष्ट्रीय संपर्क को बढ़ावा देना था। उस समय विषय क्षेत्र सीमित होने के कारण यह व्यवहारिक भी था। ग्रंथ सूची में वर्गीकृत विषयों को ''आदिम और अविकसित लोगों का समाजशास्त्र'' जैसे शीर्षक में रखा जाना, यूनेस्को की प्राथमिकताओं और वर्तमान तुलनात्मक सैद्धान्तिक पद्धति जो औद्योगिक और गैर–औद्योगिक समाजों के विषय दृष्टिकोण को दर्शाती है, को परिलक्षित करती है।

तथापि, तेजी से पत्रिका का मुख्य जोर धर्म का समाजशास्त्र, विज्ञान, राजनीति या शिक्षा

>>

जैसे विशिष्ट कार्य क्षेत्र की ग्रंथ सूची की तरफ परिवर्तित हो गया। प्रत्येक क्षेत्र का प्रवृति प्रतिवेदन उस समय के सुविख्यात लेखकों द्वारा लिखा गया। ये बहुत ही मूल्यवान और विख्यात स्त्रोत थे। शायद इन सब में सर्वाधिक जानी हुई S. M. Miller की 1960 की 'कम्परेटिव सोशल मोबिलिटी' थी जिसने अब तक की हुई सामाजिक गतिशीलता के अध्ययनों के परिणामों की तुलना की एवं सामान्य निष्कर्ष निकाले। गूगल स्कोलर इसके 253 साइटेशन बताता है, जिन में कुछ हाल ही के हैं।

1963 में शोध समितियों से लिए सम्बन्धित शोध पत्रों के समूह के अंक निकाले गये। इसमें से प्रथम परिवार के समाजशास्त्र पर था। 1990 के दशक में ये एक पृथक श्रेणी–'करण्ट सोशियोलॉजी मोनोग्राफ' में परिभाषित हो गये। प्रारंभिक अवस्था से कुछ मुद्दे एक भौगोलिक क्षेत्र तक सीमित थे। हालाँकि शीर्षकों से यह पता नहीं चलता कि क्षेत्र विषय को परिभाषित करता है या फिर सिर्फ वह देश जहाँ उल्लेखित समाजशास्त्रीय कार्य सम्पन्न किया गया था। समय के साथ सम्पूर्ण राष्ट्रीय समाजशास्त्र की समीक्षा करने वाले अंक भी छपे : स्केन्डिनेवियन समाजशास्त्र (1977), एंग्लो–कनेडियन समाजशास्त्र (1986) और अन्य। अंततः 1997 में यह निर्णय लिया गया कि प्रवृत्ति प्रतिवेदन मॉडल समकालीन आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता है क्योंकि अब तरह–तरह के अन्य सूचना स्त्रोत आसानी से उपलब्ध हैं। सूजन मेक्डेनियल के संपादक काल में शोध पत्रिका को सहकर्मी समीक्षा पत्रिका (पीयर रिव्यूड़ पत्रिका) के परम्परागत मॉडल पर पुनः शुरू किया गया। अब समाजशास्त्रीय इनक्वाइरी में नये घटनाक्रम और विवादों पर ध्यान देने के साथ ही अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले घटनाक्रम चाहे वो मौलिक क्षेत्र, अवधारणों या सिद्धान्तों और विधियों में हों और अंतर्राष्ट्रीय सहयोगियों के व्यापक समूह को संबोधित करने वाले पत्रों की समीक्षा की जाने लगी।

डेनिस स्मिथ ने अपने संपादकीय काल 2002 से 2010 तक में सूजन के अग्रणी प्रयासों को जारी रखा। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि इन आठ वर्षों में उसने पत्रिका पर अपनी व्यक्तिगत छाप न छोड़ी हो। स्मिथ ने नई शैक्षणिक मांगों पर नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। उसके संपादक काल के दौरान इस पत्रिका को आई. एस. आई. में सूचीबद्ध करने के लिए स्वीकृत किया गया और इसने सम्मानजनक वरीयता भी प्राप्त कर ली है। छपने हेतु आई कृतियों में समाजशास्त्रीय एजेन्डा ढूंढने की डेनिस की क्षमता के कारण उसके संपादक काल में एक ऐसी जगह बनी जहाँ पर इन कृतियों पर आलोचनात्मक बहस की जा सकती थी। यह आंशिक रूप से लेखकों और समालोचकों के मध्य एक दूसरे के साथ विभिन्न विषयों पर संवाद आयोजित करके किया गया।

करण्ट सोशियोलॉजी में हमेशा आई. एस.ए. की अधिकारिक भाषाएँ–अंग्रेजी, फ्रेंच और स्पेनिश में ही लेख प्रस्तुत होते थे लेकिन प्रकाशन समिति की पहल से अब यहाँ ज्यादातर सभी भाषाओं में लेख स्वीकार किये जाते हैं। इससे उन लेखकों को सुविधा होती है जो अंग्रेजी में लिखने में कठिनाई महसूस करते हैं। अंग्रेजी बोलने वाली दुनिया के बाहर काम करने वाले शोधार्थी, विशेषतः वे जो परिधिय देशों में रहते हैं, को अपने परिणामों को अंतर्राष्ट्रीय पाठकों के साथ साझा करने का अनूठा अवसर प्राप्त होता है। 2010 में इलोइजा मार्टिन ने संपादक पद संभाल लिया। ऐसा पहली बार हुआ है कि शोध पत्रिका एक गैर–केन्द्रीय शैक्षणिक संस्थान के गैर–एंग्लोफोन विद्वान के द्वारा प्रशासित होगी। यह आई.एस.ए. की सदस्यता, जो विश्व के सभी देशों में फैली हुई है, में परिवर्तन को इंगित करता है। यह पत्रिका के भविष्य के लिए चुनौतियाँ भी पैदा करता है।

आजकल दुनिया भर के विश्वविद्यालय एक ही चिंता और शिकायत से ग्रस्त हैं–प्रकाशित करो या खत्म हो जाओ। अनुदान, परियोजना अनुमोदन और प्रतिष्ठा सभी एक ओर तो शोधकर्ता के प्रकाशन की मात्रा और दूसरी ओर शोध पत्रिका की रैंकिंग, जहाँ शोध प्रकाशित हुआ है, पर निर्भर करता है। इसके अन्तर्गत और इसके बावजूद करण्ट सोशियोलॉजी संवाद/बातचीत की परम्परा पर फोकस करना चाहेगी, जहाँ अनुचिंतन सहयोगियों को बहस, आलोचना एवं सुधार के लिए उपलब्ध कराये जा सकें। समाजशास्त्र को आवश्यक रूप से वैश्विक प्रोजेक्ट मानते हुए ऐसे संवाद स्थानीय यथार्थ को समझने के लिए हमें नये स्वानुभाविक (heuristic) उपकरण दिला सकते हैं। ■

> वैश्विक कक्षा

लेरिसा टिटारेन्को, बेलारुस राज्य विश्वविद्यालय, मिन्सक एवं क्रेग. बी. लिटिल, स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क, कोर्टलैण्ड, यू. एस. ए.

नवप्रवर्तनशील अन्तरराष्ट्रीय अध्यापन सहयोग के शिल्पकार प्रोफेसर लेरिसा टिटारेन्को तथा क्रेग बी. लिटिल

नया ज्ञान का समाज मौटे तौर पर इन्टरनेट कम्यूनिकेशन टेक्नोलोजी (आई. सी. टी.) पर आधारित है। नई आई. सी. टी. एक तरफ तो हमारे जीवन को अधिक जटिल बना रही है वहीं दूसरी तरफ वे हमारे लिए असीमित अवसर भी पैदा कर रही हैं। शिक्षा के क्षेत्र में आई. सी. टी. के माध्यम से हम इलेक्ट्रानिक पुस्तकें एवं अन्य लिखित सामग्री का विश्व भर में वितरण कर सकते हैं और विद्यार्थियों को आन–लाईन शिक्षण भी करा सकते हैं। सार्वजनिक क्षेत्र में आई. सी. टी. के माध्यम से भौगोलिक दूरी की चिंता किए बगैर फोरम एवं सोशल नेटवर्कों के माध्यम से सूचनाओं का प्रसारण किया जा सकता है।

वर्चुअल कक्षा में विद्यार्थी शारीरिक दूरी से विभाजित होते हैं परन्तु एक जैसी प्रायोगिक गतिविधियाँ, समान शिक्षण सामग्री को सीखना और मुक्त रूप से उस पर चर्चा करने के कारण, प्रतीकात्मक रूप से वे एक दूसरे से जुड़े होते हैं। पारम्परिक कक्षा के विपरीत, वर्चुअल कक्षा विद्यार्थियों को कभी भी प्रवेश और निकास की सुविधा देती है। इसके बावजूद भी विद्यार्थी अपने आप को साइबर स्पेस के माध्यम से सर्वसामान्य साझे उद्यम से जुड़ा हुआ पाते हैं।

> आनलाईन सहयोग

शिक्षा में इन्टरनेट टूल्स का प्रयोग सामान्य तौर पर पारम्परिक उद्देश्यों–विद्यार्थियों को उपयोगी सूचना ढूँढना, उस सूचना का सही प्रयोग, कुशल शोध आदि करना सीखाना है। दूरस्थ शिक्षा के मामले में, विशेष रूप से सामाजिक विज्ञानों में इलेक्ट्रानिक आनलाईन टूल्स विद्यार्थियों को किसी महाविद्यालय या फिर एक दूसरे के समीप न हो कर भी अपनी पढ़ाई के साथ सक्रिय भागीदारी में मदद करते हैं। दूरस्थ शिक्षण भिन्न नगरों, गाँवों, क्षेत्रों और यहाँ तक देशों के विद्यार्थियों को एक साथ पढ़ाने का तरीका है, मानों वे एक अनूठी शारीरिक कक्षा में नामांकित हों। अतः वर्चुअल कक्षा अदृश्य होते हुए भी वास्तविक है। प्रतिभागी इसमें बौद्धिक संपर्क स्थापित कर मुद्दों पर बहस, मत का आदान–प्रदान, संयुक्त रूप से कार्य और ऐसे ही अन्य कार्यों के माध्यम से एक दूसरे का हौंसला बढ़ाते हैं। दोनों ही मामलों में पारम्परिक और आई. सी. टी. द्वारा निर्मित नई कक्षा में विद्यार्थी और शिक्षक ज्ञान के सृजन में भागेदारी कर सकते हैं। नई आई. सी. टी. से लैस कक्षा में विद्यार्थी स्वयं को सीखने की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं। वे अपने विचार दे सकते हैं अतः उनका ज्ञान व्यक्तिगत, बल्कि पारस्परिक (अर्न्त–वैयक्तिक) बन जाता है। वे इस की रचना सिर्फ पुस्तकें पढ़ कर नहीं बल्कि आनलाइन अन्तःक्रिया द्वारा एक दूसरे से संपर्क कर के करते हैं। चूंकि वे प्रशिक्षक को अपने आस पास नहीं देखते अतः वे अपने दृष्टिकोणों में अपने आपको अधिक स्वतन्त्र पाते हैं और खुलेपन से व्यक्त कर पाते हैं।

अतः नई आइ. सी. टी. का एक लाभ, विशेषतः उच्च शिक्षा के संदर्भ में, वैश्विक संजाल (नेटवर्क) से जुड़े विद्यार्थी और प्रोफेसरों का अंतर्राष्ट्रीय सहयोगी, आनलाइन सीखने के वातावरण के निर्माण की संभावना है। वर्चुअल कक्षा में भिन्न महाविद्यालयों और देशों के विद्यार्थी एक ही विषय को एक दूसरे के साथ इन्टरनेट तकनीक के माध्यम से संचरण करते हुए एक साथ पढ़ सकते हैं। दूरस्थ कक्षा में विद्यार्थियों को संवाद में जब तक वे चाहें भागेदारी करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। वे अपना कार्य (अधिकतर दिये गये पाठ के ज्ञान की जाँच के लिए) पूरा कर लर्निंग मेनेजमेन्ट सिस्टम के माध्यम से प्रेषित करते हैं। एक अंतर्राष्ट्रीय दूरस्थ कक्षा में विद्यार्थी और प्रोफेसर दोनों के लिए कार्यभार अधिक होता है लेकिन अपनी गति से कार्य करने की स्वतन्त्रता, अध्ययन के परिणामों का निजी उत्तरदायित्व और अन्य देशों के सहपाठियों के बारे में जानना और उनसे सीखने के द्वारा विद्यार्थियों की रूचि को बढाया जाता है। प्रोफेसरों के लिए अपने विद्यार्थियों को उनके हम उम्र से और साथ सीखने में मदद करना ही सबसे संतोषजनक पुरस्कार है। आनलाइन संवाद दिये गये कार्यों में से एक प्रतिनिधिक कार्य है परन्तु शायद विकासशील ज्ञान आधारित वैश्विक समाज के सदस्यों के रूप में विद्यार्थियों के लिए सबसे अधिक रूचिकर भी है।

हमारा अंतर्राष्ट्रीय दूरस्थ कक्षा को पढ़ाने का निजी अनुभव पिछले दस वर्षों का है जिसमें हमने ऐसी कक्षाएँ छः बार लगाई हैं। एक विषय (सामाजिक नियन्त्रण) पर होने वाली परम्परागत कक्षा जो SUNY (स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क) में नियमित रूप से पढ़ाई जा रही है की तुलना में विद्यार्थियों का फीडबैक (प्रत्युत्तर) इसके लिए लगातार सकारात्मक रहा है। इस वर्चुअल कक्षा के दो प्रशिक्षक–अमरीकी प्रोफेसर क्रेग लिटिल एवं बेलारूस की प्रोफेसर लेरिसा टिटारेन्को प्रथम

बार 2001 में बुल्गेरिया में आयोजित अलायन्स ऑफ यूनिवर्सिटीज फॉर डेमोक्रेसी (AUDEM) में मिले। हम दोनों ही इस कॉफ्रेंस के दौरान नई इन्टरनेट तकनीकों से बहुत प्रभावित हुए। हमने तुरन्त ही समाजशास्त्र, अन्तसांस्कृतिक संचार और तुलनात्मक विश्लेषण पद्धति में अपने विद्यार्थियों के दृष्टिकोण (क्षैतिज्य) को विस्तृत करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय दूरस्थ कक्षा का संयोजन करने का निश्चय किया। प्रत्येक बार जब यह कोर्स शुरू किया गया, 18 से 25 विद्यार्थियों ने इसमें पंजीकरण कराया। इनमें से अधिकांश समाजशास्त्र में विशेषता हासिल कर रहे थे। यह कक्षा कई बार तीन विश्वविद्यालयों की भागेदारी से पढ़ाई गई जिसमें मास्को स्टेट यूनिवर्सिटी (डा. मीरा बरगेल्सन के साथ) भी थी। अनेको बार यह अध्यापन ग्रिफिथ विश्वविद्यालय (ब्रिसबेन, ऑस्ट्रेलिया), जहाँ प्रोफेसर क्रेग लिटिल ने कुछ वर्षों पूर्व पढ़ाया था, के विद्यार्थियों के साथ भी हुआ।

> वैश्विक नागरिक बनना सीखना

जब हम अंतर्राष्ट्रीय वर्चुअल कक्षा की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य एक ऐसी अनूठी कक्षा से होता है जो दो या अधिक देशों के विद्यार्थियों से निर्मित हो। हमारे मामले में विद्यार्थी यू. एस., बेलारूस, ऑस्ट्रेलिया और रूस से थे। कक्षा के लगभग दो–तिहाई विद्यार्थियों की मातृभाषा अंग्रेजी थी। बेलारूस के एक छोटे समूह के विद्यार्थियों के लिए भागेदारी करना तिगुनी चुनौती थी : अंग्रेजी में पढ़ाया जाने वाला पाठ्यक्रम लेना, समाजशास्त्र की एक नई शाखा (सामाजिक नियन्त्रण), जो बेलारूस स्टेट यूनिवर्सिटी में नहीं पढ़ाया जाता, से मुखातिब होना और लर्नर–स्टाइल शिक्षण पद्धति पर जोर देने वाली अंतर्राष्ट्रीय वर्चुअल कक्षा में अध्ययन करना। अधिकतर बेलारूस के विद्यार्थी कभी भी विदेश नहीं गये थे अतः उन्हें उन देशों की युवा संस्कृति को जानने का अवसर प्राप्त हुआ जिनकी यात्रा वे शायद कभी न करें। उसी प्रकार अधिकतर अमरीकी व आस्ट्रेलियाई विद्यार्थी भी कभी बेलारूस या अन्य कोई पोस्ट–साम्यवादी देश (इनमें से अधिकांश यूरोप भी नहीं गये थे) नहीं गये थे अतः उनके लिए भी इसमें दुगुना मजा था।

हमारी वर्चुअल आनलाइन कक्षाओं में विद्यार्थी तीन विशिष्ट पाठ्यपुस्तकों, प्रोफेसरों द्वारा लिखे गये आनलाइन लघु व्याख्यानों और इलेक्ट्रॉनिक लेखों पर आधारित अतिरिक्त कार्य के द्वारा सीखते थे। छात्रों द्वारा शुरू की गई चर्चा में छात्र एक दूसरे से प्रश्न करते, पढ़ते समय उठने वाले समान विषय और विश्व की वर्तमान घटनाओं पर चर्चा का समावेश होता था। इन सब के द्वारा उन्हें विदेशी संस्कृतियों, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और दुनिया भर में सामाजिक नियन्त्रण के विभिन्न उपागमों के बारे में समझने में मदद मिली।

हमने इस वर्चुअल पाठ्यक्रम को कई बार सफलता पूर्वक पढ़ाया। अंत में सभी विद्यार्थियों ने यह माना कि उन्होंने किताबों व अपने आनलाइन निजी परिचितों से बहुत कुछ सीखा। अपने शिक्षण के मूल्यांकन में उन्होंने यह सूचित किया कि उन्हें प्रत्येक देश के बारे में अनूठी प्राथमिक स्तर की जानकारी मिली। वे स्वतन्त्रता से प्रश्न पूछ सकते थे और उन्हें कभी भी कक्षा के समाप्त होने का दबाब महसूस नहीं हुआ। उन्हें प्रशिक्षक की शारीरिक उपस्थिति से डर या फिर बातचीत के समयाभाव जैसी सामान्य समस्याओं का सामना भी नहीं करना पड़ा।

> विद्यार्थियों को प्रेरित करना

हमारा अर्न्तनिहित शिक्षा–विज्ञान का दर्शन डेवी की लर्नर केन्द्रित उपागम से पोषित होता है। स्थानीय कानून का लागू करना, आपराधिक मामले, दण्ड के प्रति उपागम, अधिकारों का हनन इत्यादि जैसी व्यवहारिक स्थितियों पर आनलाइन चर्चा करने के लिए विद्यार्थियों को हमेशा प्रेरित किया जाता था। वे अधिकतर स्थितियों की 'जैसी है' के रूप में चर्चा करते थे ओर यह जानने का प्रयास करते कि क्या समाधान हो सकता है। वे यह भी जानने का प्रयास करते थे कि क्यों यह विशिष्ट समाधान किसी एक विशिष्ट देश में लागू किया गया। हमारा विचार किसी प्रकार का कोई सर्वश्रेष्ठ निर्णय का चुनाव करना नहीं था बल्कि विद्यार्थियों को विचार–विमर्श की प्रक्रिया में भाग लेने देना, उनके तर्कों व विभिन्न उपागमों की तुलना में सृजनशीलता का समावेश करना था। उदाहरणार्थ रूस, अमरीका, स्वीडन अथवा ऑस्ट्रेलिया में पाई जाने वाली सामाजिक नियन्त्रण की भिन्न व्यवस्थाओं के बारे में सीखते समय वे अपराध के आंकड़ों के आधार पर विभिन्न व्यवस्थाओं की प्रभावशीलता, दण्ड के वैकल्पिक उपागमों की सामाजिक लागत, जुर्म की दर इत्यादि की तुलना कर सकते थे। हमने सामाजिक नियन्त्रण की तीन ऐतिहासिक कालों में भी तुलना की : पूर्व आधुनिक, आधुनिक और उत्तर–आधुनिक। सभी विद्यार्थियों को तीन पाठ्यपुस्तकें पढ़नी थी और फिर छोटे परन्तु नियमित अभ्यास द्वारा निबन्ध लेखन, सामूहिक गतिविधियों में और छात्रों द्वारा शुरू की गई आनलाइन चर्चा में सहभागिता द्वारा अपनी प्रगति प्रतिवेदन प्रस्तुत करना था। प्रारंभ में हमारा लर्निंग प्लेटफार्म SUNY लर्निंग नेटवर्क द्वारा प्रदान किया गया था और अब वह SUNY कोर्टलेण्ड द्वारा स्टेण्डर्ड ब्लैकबोर्ड लर्निंग मेनेजमेन्ट सिस्टम द्वारा दिया जा रहा है।

यह सभी विद्यार्थियों के लिए एक अनूठा अनुभव रहा परन्तु शायद बेलारूस के विद्यार्थियों के लिए सर्वाधिक फलदायक रहा। क्षय करती आर्थिक और राजनैतिक संकट की स्थितियाँ और अंग्रेजी में साहित्य की सीमित पहुँच के अन्तर्गत दूरस्थ शिक्षण कक्षा युवा लोगों को पश्चिमी सहपाठियों के समान ही पढ़ने के बेहतरीन अवसर प्रदान करती है। हम यह विश्वास करते हैं कि हमारे आई. सी. टी. के काम में लेने से कम से कम आंशिक रूप से तो केन्द्र और छोर के द्विभाजन को पाटा है। सभी विद्यार्थी अपने नियत कार्य और विमर्श को समानता के अभिमुखन, जिसे हम प्रकट रूप से बढ़ावा देते थे, से करते थे। पूर्व–पश्चिम विरोधाभास के परिप्रेक्ष्य से भी हम अपने विद्यार्थियों की सीमाओं और रूढ़िबद्ध धारा (Stereotypes) के परे जाने में मदद कर पाये। हमने पाश्चात्य पाठ्य पुस्तकों के साथ अन्य अतिरिक्त स्त्रोत जिसमें बेलारूसियन व अन्य अंतर्राष्ट्रीय सूचना सम्मिलित है, का भी इस्तेमाल किया। विद्यार्थियें को किसी भी सिद्धान्त से तर्क और किसी भी स्थिति की रक्षा करने की छूट थी बशर्ते उनकी प्रविष्टियाँ सम्मानजनक व शालीन हों। इस पहलू से, इस सहभागी, अंतर्राष्ट्रीय दूरस्थ शिक्षा का अनुभव लोकतंत्र एवं मानवाधिकार में एक सबक था।

सारांश में, सहभागी, आनलाइन अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन के हमारे अनुभव ने उच्च शिक्षा में आई. सी. टी. के प्रभावोत्पादक इस्तेमाल की महत्ता में विश्वास पुख्ता किया है। यह दूरदराज और राजनीतिक रूप से पृथक जगहों और देशों के लिए अधिक उपयोगी है। यह एक तरह से विद्यार्थियों के ज्ञान, अनुभव और वैश्विक दृष्टिकोण को गहनता प्रदान कर उनकी व्यक्तिगत मानवीय पूंजी को बढ़ाने का एक तरीका था। ■

1. पाठ्यक्रम के विस्तृत वर्णन के लिए देखे क्रेग बी. लिटिल, लेरिसा टिटारेन्को और मीरा बरगेल्सन (2005), ''क्रियेटिंग अ सक्सेसफुल इन्टरनेशनल डिसटेंस लर्निंग क्लासरूम''। टीचिंग सोशियोलोजी 33 (4) : 355–370

2. अंतर्राष्ट्रीय दूरस्थ शिक्षण कक्षा को पढ़ाने व योजना के निर्माण में मददगार स्त्रोतों के लिए देखें: द कोलोबोरेटिव आनलाइन इन्टरनेशनल लर्निंग (COIL) वेबसाइट http://coilcenter.purchase.edu अधिक तकनीकी प्रश्नों के लिए कृपया क्रेग लिटिल से craig.little@cortland.edu पर संपर्क करें।

> राष्ट्रीय संघो के प्रति पूर्वाग्रह

आई.एस.ए. चुनाव प्रणाली को बदलने की आवश्यकता

रोबर्टो सिप्रियानी, यूनिवर्सिटी रोमा ट्रे, इटली एवं अध्यक्ष, यूरोपीय समाजशास्त्रीय संघ के राष्ट्रीय संघों की परिषद।

सन् 2002 में ब्रिसबेन में आयोजित विश्व कांग्रेस में आई. एस.ए. ने एक बहुत बड़ा कदम उठाया जब प्रथम बार राष्ट्रीय संघों का एक उपाध्यक्ष चुनने का निर्णय लिया गया। परन्तु प्रक्रियात्मक मानदण्डों को कुछ जल्दी में बनाया गया। उस समय पद के लिए तत्काल प्रावधान करने का इरादा था। आने वाले डर्बन सम्मेलन तक चुनाव को स्थगित करने की बजाय भारतीय सुजाता पटेल को राष्ट्रीय संघों का पहला उपाध्यक्ष चुन लिया गया। (तत्पश्चात् 2006 में डर्बन में अमरीका निवासी अंग्रेज माइकल बुरावे और 2010 में गोथेनबर्ग में दक्षिण अफ्रीकी टीना उईस चुने गये। तीनों निर्वाचित समाजशास्त्री इस पद के लिए उपयुक्त रहे और उन्होंने उत्कृष्ट कार्य भी किया।

इनका निर्वाचन असेम्बली ऑफ काउन्सिल्स के व्यापक मतदाताओं के द्वारा हुआ जिसमें काउंसिल ऑफ नेशनल एसोसियेशन्स (CNA), जो प्रत्येक राष्ट्रीय संघ के एक प्रतिनिधि से निर्मित होती है, और प्रत्येक शोध समिति के एक सदस्य से बनी शोध परिषद (Research Council) भाग लेती हैं। इस बिन्दु तक राष्ट्रीय संघो व शोध समितियों की संख्या बराबर थी (55)। शोध समितियों के सदस्य राष्ट्रीय संघों की अपेक्षा विश्व कांग्रेस (जहाँ मतदान होता है) में अधिक संख्या में भाग लेते हैं अतः यहाँ आधारभूत असंतुलन है। अतः जब हम पिछले 5 चुनावों के आंकड़े देखते हैं तो हम पाते हैं कि मतदाता निम्न प्रकार से बँटा हुआ है; 2010 गोथेनबर्ग (43 CNA + 47 RC); 2006 डर्बन (35 CNA + 45 RC); 2002 ब्रिसबेन (30 CNA + 44 RC); 1998 माण्ट्रियल (38 CNA + 41 RC); 1994 बिलेफील्ड (43 CNA + 46 RC)।

अतः शोध समितियाँ राष्ट्रीय संघो के उपाध्यक्ष के चुनाव में निर्णायक भूमिका निभा सकती हैं जबकि राष्ट्रीय संघो का शोध उपाध्यक्ष के चुनाव में समानान्तर प्रभाव नहीं है।

यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि कांग्रेस के मध्य पड़ने वाले 4 वर्षों के अन्तराल में राष्ट्रीय संघो के अध्यक्ष भी एक से अधिक बार बदल जाते हैं जबकि शोध समिति के अध्यक्ष का कार्यकाल अधिक स्थिरता और सततता प्रदान करता है क्योंकि यह अधिकतर 4 वर्षों के लिए होता है। इससे शोध समितियों के अध्यक्षों को एक दूसरे को जानने का बेहतर अवसर मिलता है जिससे उनका आपसी सहयोग सुदृढ़ होता है। उसी समय के दौरान, राष्ट्रीय संघों में अक्सर जल्दी परिवर्तन होता है। कई बार तो मध्यकाल बैठक में आने वाले लोग वे नहीं होते जो कांग्रेस के दौरान मतदान करने के लिए मिलते हैं।

इन कारणों से राष्ट्रीय संघों के उपाध्यक्ष पद का दावेदार चाहे वो स्वयं राष्ट्रीय संघों के द्वारा समर्थित हो, वो शोध समितियों के उम्मीदवार से हार सकता है। इसका मतलब है कि वे न सिर्फ उपाध्यक्ष, शोध बल्कि उपाध्यक्ष, राष्ट्रीय संघ का भी चुनाव कर लेते हैं।

अतः राष्ट्रीय संघों को अपने उपाध्यक्ष और शोध समितियों को अपने उपाध्यक्ष के लिए विशिष्ट अधिकार देना अधिक सही और लोकतांत्रिक होगा। अंतर्राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय संघ की एकात्मक प्रकृति तभी पूर्ण हो जाती है जब इसके सारे प्रतिनिधि अध्यक्ष एवं शेष तीन उपाध्यक्ष (वित्त, प्रकाशन और कार्यक्रम) के लिए मतदान करते हैं। अतः इस कारण से राष्ट्रीय संघो और शोध के उपाध्यक्ष की चुनाव प्रणाली को बदलना काफी लाभदायक होगा। ■

> जापानी सम्पादकीय दल का परिचय

हम यहाँ पर जापानी सम्पादकीय दल के उत्साही सहयोगियों को प्रस्तुत कर रहे हैं जो कि वैश्विक संवाद के अनुवाद और इसका उत्पादन करते हैं।

हम जापानी क्षेत्रीय सम्पादक दुनियाभर के वैश्विक संवाद के पाठकों को अपना परिचय देते हुए अपार हर्ष एवम् उत्तेजना का अनुभव कर रहे हैं। हम अपनी कृतज्ञता प्रोफेसर बुरावे एवम् उन सभी वैश्विक संवाद के भागीदारों के प्रति प्रकट करना चाहेंगें जो कि विश्व भर में अनेकों और आवश्यक मसलों पर अपने विविध अनुभवों को बाँटते हैं। हम आप सभी का योकोहामा में 2014 में होनें वाले आई.एस.ए. के विश्व समाजशास्त्र सम्मेलन में स्वागत करने का इन्तजार कर रहे हैं और पुनरुज्जिवित होते हुए जापान के अपने अनुभवों को बांटने के लिए भी।

मारी शिबा (सम्पादकीय प्रमुख) ने अपनी मास्टर्स की उपाधि बोस्टन विश्वविद्यालय से शिक्षा में ली और बाद में विविध पृष्ठभूमि के बालकों को बोस्टन में पढ़ाया। वह अभी नागोया विश्वविद्यालय में पीएच. डी. की विद्यार्थी है तथा प्रवासन का समाजशास्त्र पर शोध समिति 31 की सदस्य है। उसके शोध मुख्यतः अमेरिका और स्वीडन में अन्तरराष्ट्रीय अभिग्रहण पर केन्द्रित हैं।

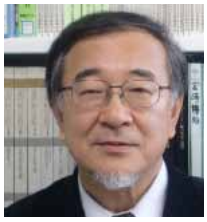

काजुहिसा निशिहारा (सम्पादकीय निरीक्षक) नागोया विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र के प्रोफेसर हैं एवम् जापान की सोसाइटी ऑफ सोसियोलोजिकल थ्योरी के अध्यक्ष भी हैं। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त विशेषतः वैश्विकरण और अन्तरा–राष्ट्रवाद पर प्रघटनात्मक समाजशास्त्र उनके प्रमुख शोध क्षेत्र हैं। अभी वह पूर्वी एशिया में प्रवसन, विशेषतौर पर जापान में विदेशी कृषि श्रमिकों पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं।

यू फुकुडा क्वान्साई गाकुईन विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट स्कूल ऑफ समाजशास्त्र में पीएच. डी. का विद्यार्थी है। धर्म के समाजशास्त्र तथा सामुहिक याददाश्त पर अध्ययन उसकी विशेषता है। इन्होंने विपदा के बाद आने वाले अनुष्ठानों जैसे कि एटम बम्ब की स्मृति समारोहों एवं भूकम्प पीडितों पर क्षेत्र कार्य किया है।

कोसुके हिमेनो टोकियो विश्वविद्यालय में डाक्टर की उपाधि का विद्यार्थी है जहां वह ग्रामीण समाजशास्त्र पढ रहा है तथा नगानो प्रशासक प्रान्त (Prefecture) में घटती जनसंख्या वाले गाँवों तथा उनकी संस्कृति के संरक्षण में क्षेत्र कार्य कर रहा है। वैश्विक संवाद के जापानी अनुवाद दल के सदस्य बनने पर वह बहुत गर्वित महसूस करता है।

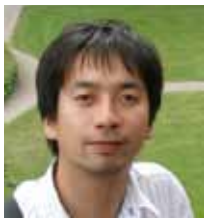

काजुहिरो इकेदा ने 2005 में टोकियो विश्वविद्यालय से समाजशास्त्र में डाक्टरेट का अध्ययन पूरा कर लिया है तथा अब सोफिया विश्वविद्यालय, टोकियो में पोस्ट–डाक्टरल शोधार्थी है। वह 'तुलनात्मक जलवायू परिवर्तन नीति नेटवर्क' नामक अन्तरराष्ट्रीय शोध परियोजना का सदस्य है तथा 'पर्यावरण एवं समाज' शोध समिति 24 का भी सदस्य है।

युताका इवादाते समाज विज्ञान संकाय, हितोत्सुबाशी विश्वविद्यालय, टोकियो में डाक्टर की उपाधि का विद्यार्थी है। सामाजिक अन्तरालों पर जो कि उन युवा कामगारों के प्रतिदिन के व्यवहार में आते हैं जो कि शहरी (उत्तर–) नवउदारवादी परिस्थितियों में संघर्षरत हैं पर वह अपना क्षेत्र कार्य कर रहा है।

मिशिको साम्बे ने अपनी प्रथम उपाधि क्योटो विश्वविद्यालय से विदेशी अध्ययन में प्राप्त की एवं वह अभी ओचानोमिजू विश्वविद्यालय में पीएच.डी. की विद्यार्थी है जहां से उसने समाज विज्ञान में अपनी मास्टर्स उपाधि प्राप्त की। उसका अनुसंधान जापान में यौन अल्पसंख्यकों और उनके विषमलैंगिक माता–पिता के मध्य सम्बधों पर केन्द्रित है।

टाकाको साटो ने विस्कोसिन–सुपीरियर विश्वविद्यालय से अन्तरराष्ट्रीय शांति अध्ययन एवं स्पेनिश भाषा में स्नातक उपाधि प्राप्त की तथा वर्तमान में वह होक्काइडो विश्वविद्यालय में पीएच.डी. की विद्यार्थी है। वह अपना शोध अमेरिका की आव्रजन नीति एवं दस्तावेज–रहित आप्रवासियों से सम्बन्धित सामाजिक नेटवर्क पर कर रही है।

योशिया शियोतानी, पीएच.डी., टोहोकु विश्वविद्यालय में सामाजिक स्तरीकरण एवं असमानताओं पर अध्ययन कर रहा है। हाल ही में उसने पूर्वी जापान के विशाल भूकम्प पीडितों पर एक सर्वेक्षण किया है। वह पीडितों को सामाजिक समर्थन तथा उनके मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति एवं प्रावधानों के मध्य सम्बन्धों का विश्लेश्ण कर रहा है।

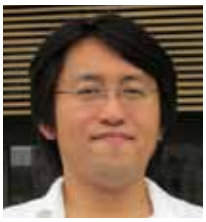

टोमोहिरो टाकामि, टोकियो विश्वविद्यालय में पीएच. डी., की उपाधि का विद्यार्थी है तथा इसी के साथ जापानीज सोसाइटी फॉर प्रमोशन आफ साइन्सेज का रिसर्च फैलो भी है। उसकी मुख्य शोध रुचि कामगारों की स्वायत्तता में है, विशेष रुप से जापान में काम के अधिक घटों के मामलों में।

>86 वर्ष की आयु में जॉन रेक्स का निधन

सेली टॉमलिनसन, आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, यू. के. और राबर्ट मूर, लिवरपूल विश्वविद्यालय, यू. के.

जॉन रेक्स – सामाजिक सिद्धान्त एवं प्रजातीय सम्बन्धों का अग्रगामी

जॉन रेक्स जिनका निधन 18 दिसम्बर 2011 को हुआ, वे अत्यन्त उत्साही, उर्जावान और बुद्धिजीवी व्यक्ति के रूप में याद किये जायेंगे, जिसने समाजशास्त्रीय अध्ययन को नई विद्वत्वपूर्ण उँचाइयों तक पहुँचाया। उनका जन्म दक्षिण अफ्रीका के पोर्ट एलिजाबेथ में हुआ और द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान 18 वर्ष की आयु में वे रॉयल नेवी में भर्ती हुए। दक्षिण अफ्रीका लौटने के पश्चात् और रंग भेद की अनुचितता के बारे में जानकारी होने के कारण उन्होंने समाजशास्त्र और दर्शनशास्त्र पढ़ने से पूर्व धर्मशास्त्र (Theology) का अध्ययन किया। उन्होंने थोड़े समय के लिए रोडेशिया के एक विद्यालय में शिक्षण कार्य किया। उन्हें रंगभेद विरोधी आंदोलन में सहयोग करने के कारण वहाँ से निष्कासित कर दिया गया। उन्होंने अपनी पीएच. डी. लीड्स विश्वविद्यालय से प्राप्त की। यहाँ उन्होंने 1962 तक शिक्षण कार्य भी किया। तत्पश्चात वे दो वर्ष के लिए बिरमिंगहम विश्वविद्यालय भी गये। उसके बाद वे दो कामयाब समाजशास्त्र विभाग – 1964 में डरहम विश्वविद्यालय और 1970 में वारिक (Warwick) विश्वविद्यालय में संस्थापक प्रोफेसर बने। वे 1979 से 1984 तक एस्टन विश्वविद्यालय में प्रजाति सम्बन्धों की सोशल साईन्स रिसर्च कॉउन्सिल की शोध इकाई के संस्थापक एवं निदेशक रहे जिसके बाद वे वारिक लौट गये। टोरेण्टो, केप टाउन और न्यूयोर्क में विजिटिंग प्रोफेसरशिप के अलावा वे अपनी अंतिम बीमारी तक वारिक में पहले प्रोफेसर और फिर एमेरिटस प्रोफेसर रहे।

जॉन के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के प्रति जूनून ने उनसे ''की प्रोबलम्स इन सोशियोलोजिकल थ्योरी'' (1964) जैसी शास्त्रीय कृति की रचना करवाई। इस कृति ने समाजशास्त्र को पारसन्स के प्रकार्यवाद पर अत्यन्त निर्भरता से मुक्त किया और अनेक विद्यार्थियों में समाजशास्त्र की उत्तम कृतियों के प्रति जीवनपर्यन्त की रूचि जगाई। मार्क्स, दुर्खीम, सिमेल और विशेषतः मेक्स वेबर की कृतियाँ जॉन के विचारों के केन्द्र में थीं। उन्होंने 1981 में 'सामाजिक संघर्ष' पर पुस्तक लिखते समय मूल्यों और हितों के संघर्ष को प्रतिमानात्मक मानते हुए संघर्ष के सिद्धान्त में रूचि को पुनर्जीवित किया। वे जानते थे कि शक्ति और दबावशाली ताकतें समाज में कैसे कार्य करती हैं। हालाँकि वे एक बार संसद के भावी लेबर सदस्य के रूप में खड़े हुए थे परन्तु उनका मानना था कि सामाजिक वैज्ञानिकों का कार्य विश्लेषण और व्याख्या करना है न कि सक्रिय राजनीति पक्ष में खड़े होना।

विज्ञान के प्रति उनके अनुराग/चिंता के बावजूद पूर्व उपनिवेशी अप्रवासी, जो 1950 में ब्रिटेन में आये थे, अप्रवासी के प्रति निर्देशित भेदभाव और प्रजातिवाद पर उनका गुस्सा कम नहीं था। वे युनेस्को की 'प्रजातिवाद एवं प्रजातीय पूर्वाग्रहों' पर अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समिति जिसने 1967 में अपने कथन में कहा था कि ''तथाकथित प्रजाति सम्बन्धों से उत्पन्न होने वाली समस्याएँ प्राणीशास्त्रीय होने के बजाय सामाजिक होती हैं'' के सदस्य भी थे। यह उस समय बहुत ही अनूठा विचार था। वे अंतर्राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय परिषद की प्रजाति एवं प्रजातिक सम्बन्धों की समिति के आठ वर्षों तक अध्यक्ष रहे। 1964 में राबर्ट मूर के साथ उन्होंने स्पार्कब्रूक, बिरमिंगहम में कार्य शुरू किया जिसकी परिणिती उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति 'प्रजाति, समुदाय और संघर्ष' (Race, Community and Conflict) (रेक्स एवं मूर, 1967) के रूप में हुई। इसके पश्चात् वे 1974 में हेण्डसवर्थ, बिरमिंगहम में शोध करने हेतु लौट गये और ''ब्रिटिश शहर में औपनिवेशी अप्रवासी : एक वर्ग विश्लेषण'' (Colonial Immigrants in a British Colony: A Class Analysis) (रेक्स एवं टॉमलिनसन, 1979) नामक कृति का लेखन किया।

जॉन के बड़े दृढ़ विचार थे और वे बहस में हठी हो जाते थे। वे अपने कई सहयोगी, जो उनसे असहमत थे, को खीझाते थे। जिनके विचार उन्हें सतही लगते थे उन्हें उत्तेजित करने में जॉन को बड़ा मजा आता था। परन्तु उनके स्वयं के विचार हमेशा सम्मानित थे और वे व्यक्ति के रूप में सच्चा अनुराग अनुप्रेरित करते थे। उनके निधन के पश्चात, उनके पूर्व विद्यार्थियों और सहयोगियों की तरफ से बहुत श्रद्धांजलियाँ आईं जिसमें यह संदेश था कि ''उन्होंने मेरा जीवन ही बदल दिया।'' उनकी कृतियों ने विश्व में सैंकड़ों लोगों को प्रभावित किया। उनका अंतिम लेख, 1970 के दशक में बिरमिंगहम में समाजशास्त्र के प्रोफेसर विल्हेम बाल्डमस पर 2010 में प्रकाशित एक पुस्तक का अध्याय था। उन्होंने लिखा, ''बाल्डमस एक अनूठा व्यक्ति था (.....) वह समाजशास्त्रीय चिंतन और व्यवहार की बदलती प्रवृत्तियों के साथ नहीं जाता था (.....) वह ऐसा व्यक्ति था जो अपने विश्वास पर दृढ़ था और दोस्तों व सहयोगियों से संबंध रखते हुए उन पर टिका रहता था।'' वे यहाँ अपने बारे में भी लिख रहे हो सकते थे। उन्हें ब्रिटिश सोशियोलोजिकल एसोसियेशन द्वारा 2010 में लाइफटाइम अचीवमेंट पुरस्कार दिया गया। वे परिवार, मित्रों और सहयोगियों द्वारा याद किये जायेंगे। ■

> कुर्ट जोनासोह्न, 1920-2011

सेलिन सेन्ट–पियरे, क्यूबेक विश्वविद्यालय, मान्ट्रियल, आई.एस.ए., कार्यकारी सचिव 1974–1979 एवं सदस्य, आई.एस.ए. कार्यकारिणी समिति, 1986–1990.

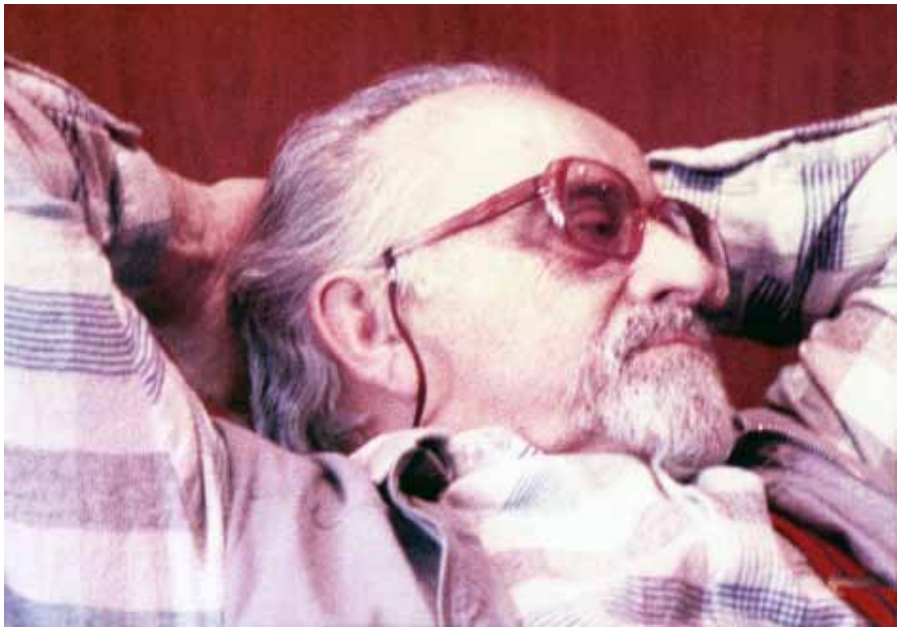

कुर्ट जोनासोह्न – आई.एस.ए. का निष्ठावान योगदाता

कुर्ट जोनासोह्न और मैं 1974 में आई.एस.ए. के कार्यकारी सचिव चुने गये। उस समय टॉम बोटोमोर अध्यक्ष थे और सचिवालय मिलान से क्यूबेक विश्वविद्यालय, मान्ट्रियल (UQAM) जहाँ मैं प्रोफेसर था, स्थानांतरित हो रहा था। कुर्ट कानकोर्डिया में समाजशास्त्र के प्रोफेसर थे। हमने करीबन 5 वर्षों (1974–1979) तक साथ कार्य किया। उसके बाद उन्होंने अपने कार्यकारी सचिव के पद को UQAM में ही समाजशास्त्र के प्रोफेसर, मार्सेल रफी के साथ शेयर किया, जब तक सचिवालय 1983 में एमस्टरडेम स्थानांतरित नहीं हो गया।

यद्यपि कुर्ट मान्ट्रियल और पूरे कनाड़ा के अंग्रेजी भाषायी शैक्षणिक समुदाय में सुदृढ़ स्थिति में थे, वे फ्रेंच भी धाराप्रवाह बोलते थे। सचिवालय में हमारी दैनिक क्रियाएँ ज्यादातर हमेशा फ्रेंच में ही होती थीं और वे ऐसा करने का आग्रह करते थे। मैं उनकी क्यूबेक की फ्रेंच भाषायी संस्कृति के प्रति संवेदनशीलता का प्रशंसक था। इसने ऐसे समय में आई. एस. ए. की कार्य पद्धति में फ्रेंच भाषा की भूमिका को बढ़ाने में योगदान दिया जब अधिकतर संपर्क और कामकाज अंग्रेजी में ही होता था।

हम दोनों में से कोई भी वित्तीय और बजट सम्बन्धी मामलों में दिलचस्पी नहीं रखता था लेकिन फिर भी कुर्ट ने उदारता दिखाते हुए कोषाध्यक्ष की जिम्मेदारी उठाना स्वीकार किया। यह कार्य उस समय की आई. एस. ए. की कमजोर वित्तीय स्थिति को देखते हुए आसान नहीं था। हमें व्यक्तिगत और सामूहिक सदस्यता में वृद्धि से मदद तो मिली थी फिर भी देय शुल्क निम्न ही रहे और 1974 की टोरेण्टो कॉंग्रेस में घाटा हुआ। कुर्ट ने इस खतरनाक/असुरक्षित स्थिति का कार्यकारिणी समिति के अन्य सदस्यों की मदद से समाधान किया। हमारे पहले कार्यकाल (1974–1978) की समाप्ति तक हमने देय शुल्क और अपने प्रकाशनों से अधिक धन प्राप्त करने के लिए कई सुझावों के साथ वित्तीय प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। आई. एस. ए. की वित्तीय परेशानियों के बावजूद कुर्ट हमेशा स्पष्टवादी, ईमानदार और जिम्मेदारी की भावना का प्रदर्शन करने वाले व्यक्ति थे।

कुर्ट जोनासोह्न ने 1980 के दशक के दौरान आई. एस. ए. बुलेटिन में इतिवृत्त (इतिहास की श्रृंखला) प्रकाशित कर आई. एस. ए. के इतिहास के बारे में हमारे ज्ञान को बढ़ाने में विशिष्ट योगदान दिया। उनके द्वारा एकत्रित संदर्भ और आई. एस. ए. के पूर्व नेतृत्व के साक्षात्कारों के प्रतिलेखन, जेनिफर प्लाट द्वारा 1998 में प्रकाशित ''अ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ द आई. एस. ए. : 1948–1997'' के प्रारंभ बिन्दु बने।

अपने कार्यकारी सचिव के काल की समाप्ति के बाद भी कुर्ट ने आई.एस.ए. के साथ कई वर्षों तक कार्य किया। इस काल के दौरान उन्होंने शिक्षण और जाति संहार अध्ययन (Genocide) पर अपने शोध को जारी रखा। वे इस क्षेत्र में अग्रणी विद्वान थे और उनके इस शोध का समापन उनके सहयोगी फ्रेंक चॉक के साथ 1986 में मान्ट्रियल इन्सटीट्यूट फॉर जिनोसाइड़ स्टडीज की स्थापना के साथ हुआ। 31 अगस्त 1920 को कोलोन, जर्मनी में जन्में कुर्ट का निधन 1 दिसम्बर 2011 को मान्ट्रियल में हुआ। ■

> कोलम्बियन समाजशास्त्र में विरासत और सम्बन्ध विच्छेद

पेट्रिशिया एस. जरामिलो गुएरा एवं फर्नान्डो क्यूबाइड्स, नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ कोलम्बिया, बोगोटा

समाजशास्त्र एक गंभीर व्यवसाय है। नवंबर 2–4, 2011 में काली में आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन में भाग लेते हुए कोलम्बिया के युवा समाजशास्त्री

कोलम्बिया के समाजशास्त्री दसवें राष्ट्रीय समाशास्त्रीय सम्मेलन के लिए 2–4 नवम्बर 2011 को काली शहर में एकत्रित हुए। इस सम्मेलन का विषय समकालीन कोलम्बियन समाजशास्त्र में विरासत और सम्बन्ध–विच्छेद था। इस सम्मेलन के आयोजक यूनिर्वसिदाद डेल वले, यूनिवर्सिदाद ICESI एवं यूनिवर्सिदाद डेल पेसिफिको के समाजशास्त्र विभाग थे। इसके अतिरिक्त वेबर के चिंतन को समर्पित एक पूर्व–सम्मेलन का भी आयोजन किया गया था।

हमारे विषय की चकबंदी के लिए इस सम्मेलन का सफल होना अत्यन्त महत्वपूर्ण था क्योंकि अन्तिम सम्मेलन 2006 में हुआ था। यद्यपि कोलम्बियन समाजशास्त्रीय परम्परा 1950 के दशक तक जाती है परन्तु इसमें कई बाधाएँ आई हैं, जैसे हिंसक संदर्भ जिसमें यह संचालित होती है और छापामार (गुरिल्ला) आंदोलन के साथ इसके तथाकथित जुड़ाव। कई विभाग तो करीबन 15 वर्षों के लिए बंद हो गये थे और अब पिछले 5 से 10 वर्षों में वे पुनः खुले हैं।

>>

सारतत्व के संदर्भ में देखें तो कोलम्बियन समाजशास्त्र विरोधाभासों से परिपूर्ण समाज से निर्मित हुआ है, जैसे लम्बे समय से स्थापित लोकतंत्र के साथ हिंसा का साथ रहना, लैटिन अमेरिका में असमानता का उच्चतम स्तर होते हुए भी विधि व्यवस्था का विरले पाये जाने वाले सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को मान्यता देना। कोलम्बिया समाजशास्त्र को एक असाधारण प्रयोगशाला उपलब्ध कराता है परन्तु स्थिति यह भी माँग करती है कि समाजशास्त्र महान सामाजिक दायित्व निभाये/दर्शाए।

वेबर पर पूर्व–सम्मेलन बैठक का आयोजन कोलम्बिया के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग द्वारा एवं सम्मेलन का आयोजन करने वाले विश्वविद्यालयों के सहयोग से हुआ। इसके अंतर्गत मेक्स वेबर के चिंतन की व्याख्या में होने वाले नवीन घटनाक्रम पर विमर्श करने का प्रयास किया गया था। इस खुली सेमिनार में विख्यात अंतर्राष्ट्रीय विद्वान : जर्मनी के वुल्फगेंग श्लूच्टर, मेक्सिको के फ्रांसिस्को गिल विलेगास, अर्जेन्टीना के इस्तेबन वर्निक और स्पेन के जेवियर रोडरिग्यूज मार्टिनेज एवं जोस अल्माराज पेस्टाना ने भाग लिया। प्रतिभागियों ने न केवल विशेषज्ञों अपितु सामान्य जनता के लिए भी वेबर की कृतियों को दुबारा पढ़ने की महत्ता को रेखांकित किया। स्थानीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही समाजशास्त्रियों ने कहा कि शास्त्रीय लेखक की कृतियों को समर्पित ऐसी उच्च स्तर की चर्चा बहुत दुर्लभ है और यह कोलम्बिया में सैद्धान्तिक चिंतन के स्तर को दर्शाती है।

मुख्य सम्मेलन में भी कई अंतर्राष्ट्रीय वक्ता थे : केलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले से आई.एस.ए. अध्यक्ष माइकल बुरावे, फेडरल युनिवर्सिटी ऑफ परनामबुको (ब्राजील) से लेटिन अमेरिकन सोशियोलॉजिकल एसोसियेशन (ALAS) के अध्यक्ष हेनरिक मार्टिन्स; प्रिंस्टन विश्वविद्यालय में सेन्टर फॉर माइग्रेशन एण्ड डेवलपमेण्ट के निदेशक अलेजान्ड्रो पोर्टेस; यूनिवर्सिटी ऑफ ब्यूनोस आयर्स से एमिलियो टेण्टी; केथोलिक यूनिवर्सिटी ऑफ सेनटियागो (चिली) से मेनुअल एंटोनियो गरेटॉन और यूनिवर्सिटी एकेडमी ऑफ क्रिश्चियन ह्यूमनिज्म (चिली) से मिल्टन विदाल। इन अंतर्राष्ट्रीय हस्तियों ने छात्र आंदोलन, वैश्विक समाजशास्त्र, आप्रवास, जन समाजशास्त्र, एवं उत्तर उपनिवेशवाद के बारे में समकालीन बहस को जीवन्त बनाया।

आयोजकों के प्रयासों के इससे बेहतर परिणाम नहीं हो सकते थे : 24 कार्य सत्र, 600 प्रतिभागी, 200 शोध पत्र, 11 अंतर्राष्ट्रीय मेहमान एवं कोलम्बियन नेटवर्क ऑफ सोशियोलॉजी स्कूलस एण्ड डिपार्टमेण्टस (RECFADES) के 15 समाजशास्त्र अध्ययन केन्द्र के प्रतिभागी। सम्मेलन की सफलता स्पष्ट दिखाई दे रही थी और इस की चर्चा सम्मेलन के अंतिम सत्र में इस टिप्पणी के साथ हुई कि ''समाजशास्त्र स्वस्थ अवस्था में है'' और ''हमारा विषय किसी अन्य वैज्ञानिक ज्ञान की भांति ही वैध और उपयुक्त है''।

कार्य सत्रों में भी वैश्विक रुझानों के प्रतिकूल विद्यालयों और आने वाले विद्यार्थियों की बढ़ती संख्या ने कोलम्बियन समाजशास्त्र की तेजस्विता की पुष्टि की है। यह भी देखा गया कि कई समाजशास्त्री स्नातक की डिग्री लेने के पश्चात् ज्ञान के अन्य क्षेत्रों को समृद्ध बनाने चले जाते हैं। विषय में भी विषयपरकता के नये विचार, लिंग के गैर पारम्परिक उपागम, धर्म के प्रति नये विचार और अन्य बहुत कुछ से विविधता आ रही है। वे विषय जो कभी अस्वीकारे गये थे आज फैशनेबल हो गये हैं। जैसे फैशन, स्वाद और कलात्मक अभिव्यक्ति की नजर से उपभोग को देखना। फिर कोलम्बियन समाजशास्त्र के परम्परागत विषय भी थे – हिंसा, कृषक आंदोलन, ग्रामीण समुदाय एवं श्रम संगठन – जहाँ लोगों की रूचि बरकरार है।

प्रतिभागियों ने सालसा के शहर में आयोजकों द्वारा सम्मेलन को बौद्धिक दृष्टि से उत्कृष्ट बनाने के प्रयासों, लगन और क्षमता के साथ ही उनकी प्रचुर उदारता, मेहमानवाजी और असाधारण गर्मजोशी की भरपूर प्रशंसा की। ■

> यूरेशियन क्षेत्र में तुर्किक समाजशास्त्र

ऐलेना जाड्रावोमिस्लोवा, यूरोपियन विश्वविद्यालय, सेन्ट पीटर्सबर्ग, रुस तथा सदस्य आई.एस.ए. कार्यकारिणी, 2010–2014

बाशखोरतोस्तान गणराज्य की राजधानी उफा में तुर्कि के समाजशास्त्रियों की चौथी विश्व कॉंग्रेस की सभा।

यूरोपियन राष्ट्रों, टर्की, कजाखस्तान, अजरबेजान, उज्बेकिस्तान, किरग्स्तिान, ताजिकिस्तान और रुस के समाज विज्ञान एवं मानविकी के प्रमुख विद्वान उफा में तुर्किक समाजशास्त्रियों के चौथे विश्व सम्मेलन, 4 – 6 सितम्बर 2011 में भाग लेने के लिए आये। विषय था 'यूरोपियन क्षेत्रः 21वीं सदी में तुर्किक भाषी देशों और रुसी क्षेत्रों की सभ्यता संभाव्यता'। पहला विश्व सम्मेलन 2005 में टर्की में हुआ था और उसके बाद कजाखस्तान तथा किरग्स्तिान में सम्मेलन हुए।

उफा दक्षिण युराल्स का एक खूबसूरत तथा मेहमाननवाज शहर है जिसकी जनसंख्या एक लाख से अधिक है। यह रशियन फेडरेशन के एक स्वायत क्षेत्र बाशखोरतोस्तान गणतन्त्र की राजधानी है। यह एक बहु प्रजातिक क्षेत्र है जिसमे रुसीयों के बाद बाश्खिर दूसरा बड़ा प्रजातिक समूह है। बाश्खिर भाषा तुर्किक भाषायी समूहों से सम्बन्धित है। बाश्खिर संविधान के अनुसार दो भाषाओं का अधिकारिक दर्जा है – रुसी एवं बाश्खिर । हालांकि बाश्खिर भाषा व्यापक रुप से शहरी क्षेत्रों मे नहीं बोली जाती है एवं इसकी सार्वजनिक उपस्थिति

>>

के विस्तार के राजनैतिक प्रयासों के बावजूद यह विलुप्त होने के खतरे के तहत मानी जाती है।

पेशेवर समाजशास्त्रीय संचार रुसी भाषा में ही किया जाता है। बाश्खिर समाजशास्त्रीय एसोशिएशन, जो कि रशियन सोसाइटी आफ सोशियोलोजिस्टस् का एक सामुहिक सदस्य है, विभिन्न क्षेत्रों एवं देशों के 200 से अधिक भागीदारों के सम्मेलन की मेजबानी कर रहा था। बाशखोरतोस्तान की सरकार सम्मेलन का समर्थन वित्तीय सहायता और समारोह के लिए संगठनात्मक सहायता देकर कर रही थी। बाशखोरतोस्तान के राष्ट्रपति के एक प्रतिनिधि ने स्वागत भाषण दिया। महत्वपूर्ण प्रतिकात्मक घटनाओं पर अन्य बधाईयां बाश्खिर ऐकेडमी आफ साइन्सेज के प्रमुख, तुर्किक समाजशास्त्र परिषद के बुजुर्ग उपाध्यक्ष, रशियन सोसाइटि आफ सोशियोलोजिस्टस् के प्रतिनिधि, अजरबेजान के उपाध्यक्ष एवं आई.एस.ए. के प्रतिनिधि के रुप में मेरे द्वारा दी गई। रुसी एवं तुर्किक बैठक की कार्यकारी भाषाऐं थीं। तात्कालिक अनुवाद उपलब्ध था।

प्लेनेरी पेपर्स यूरेशिया को समर्पित थे – इसके क्षेत्र, इसकी सभ्यता, इसका साझा इतिहास, इसकी साझी समस्याएं तथा भविष्य। तुर्किक समाजशास्त्र परिषद के बुजुर्ग, प्रोफेसर एरकाल मुस्तफा के अनुसार सम्मेलन का प्रमुख उद्धेश्य बहुध्रुवीय वैश्विक दुनिया को एक समाजशास्त्रीय अवधारणा प्रदान करना था जो कि सतत विकास तथा विभिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक–आर्थिक एवं राजनैतिक व्यवस्थाओं के एकीकरण को बढावा दे सके। प्लेनेरी वक्ता यूरेशियाई सभ्यता के केन्द में संकर पहचान के विचार से प्ररित थे जो कि अन्यों के अलावा प्रारंभिक शिविरों मे रुसी मानवजाति विज्ञानी एल. गुमिलेव द्वारा विकसित किया गया था। उन्होनें अपने विचारों को सामाजिक तथा ऐतिहासिक विकास के टर्किश प्रतिमान पर अन्तरराष्ट्रीय पहचान को मजबूत करनें एवं तुर्किक विश्व के वैश्विक एकीकरण की जांच के महत्व पर केन्द्रित किया।

समकालीन यूरेशियनिज्म के सिद्धान्त एवं व्यवहार तथा तुर्किक विश्व व रुस की वास्तविक समस्याओं तथा समाज विज्ञान के मध्य सम्बन्धों पर पर्चे पढ़े गये । सम्मेलन के चार भाग इस प्रकार थेः 'यूरेशियनिज्मः वैज्ञानिक अनुसंधान एवं आंकलन की समस्याएं तथा संभावनाएं', 'समकालीन यूरेशियन क्षेत्र की सामाजिक गतिशीलताः समस्याएं एवं समाधान', 'यूरेशियाई क्षेत्र के सांस्कृतिक आयाम', तथा 'तुर्किक विश्व व रुस की सामाजिक शिक्षाएं'। एक बडा कदम यूरेशियाई समाजशास्त्रीय पत्रिका (The Eurasian Sociological Journal) को प्रारम्भ करने के निर्णय का लिया गया।

गलियारों में होने वाली कार्यवाहियां बहुत कुछ समेटे हुए थीं – अन्तर–क्षेत्रीय एवं पार–देशीय सम्पर्कों की स्थापना तथा नवीनीकरण, विश्वविद्यालयों के मध्य प्राध्यापकों तथा छात्रों के आदान–प्रदान सम्बन्धी व्यवस्थाऐं, संयुक्त अनुसंधान तथा अनुवाद परियोजनाओं के अवसरों पर चर्चा जो कि विभिन्न देशों के समाजशास्त्रियों को आपस में जोड़ सकें। इन बैठकों का एक अभीष्ट प्रयोजन बाश्खिर समाजशास्त्रीय परिषद के प्रतीकात्मक महत्व में वृद्धि करना था जो कि अक्टूबर 2012 में समस्त रुसी समाजशास्त्रियों के सम्मेलन की मेजबानी करने वाली है।

उनकी आम सभा में सदस्यों ने विभिन्न प्रस्तावों को तैयार एवं स्वीकार किया जो तुर्किक भाषी देशों के समाजशास्त्रियों के मध्य सहयोग को आसान बना सके तथा रूसी एवं तुर्किक समाजशास्त्रियों के मध्य सहयोग को बढ़ा सके। टर्की तथा उफा विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि गण प्राध्यापकों तथा छात्रों के मध्य आदान–प्रदान पर सहमत हुए, तथा भोज के अवसर पर तुर्किक राष्ट्रों के समाजशास्त्रियो द्वारा उपहारों का आदान–प्रदान उनके पेशेवर तथा सांस्कृतिक जुडावों का प्रतीक बना।

सम्मेलन में बाश्खिर समाजशास्त्रीय स्कूल के संस्थापक नरीमन आइटोव (1925–1999) की याद में एक स्मृति पट्टिका की स्थापना की गई। आइटोव सोवियत समाजशास्त्रियों की पहली पीढ़ी से सम्बन्धित हैं। सन् 1964 में उन्होंनें उफा में समाजशास्त्रीय प्रयोगशाला की स्थापना की थी। क्षेत्रीय योजनाओं तथा सामाजिक इन्जीनीयरिंग के क्षेत्र में उनक योगदान है तथा उन्होनें सामाजिक गतिशीलता एवं वैज्ञानिक तकनीकी क्रान्ति के सामाजिक परिणामों पर अनुसंधान किया। वे 300 से अधिक प्रकाशनों के लेखक थे। सन् 2000 में बाशखोरतोस्तान की अकादमी आफ साईन्सेज ने सर्वोत्तम समाजशास्त्रीय प्रकाशन के लिए आइटोव अवार्ड की स्थापना की।

संक्षेप में, यह सम्मेलन तुर्की बोलने वाले राष्ट्रों के बीच सांस्कृतिक और विद्धानों क मध्य चल रहे एकीकरण का सबूत था जिसमें अन्तरराष्ट्रीय सहयोग शामिल था और समाजशास्त्रीय विविधता की पहचान थी। इसमे आश्चर्य नहीं कि इस प्रक्रिया में टर्की के समाजशास्त्रियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। मध्य एशियाई राज्य जो कि सोवियत रुस के पतन के बाद स्वतन्त्र हो गये थे और साथ ही उत्तरी काकेशिया और रुस के पूर्वी हिस्सों मे तुर्की बोलने वाली काफी बडी आबादी है। लेकिन एकीकरण केवल भाषाई समानताओं पर ही आधारित नहीं था बल्कि सभ्यता के सांझा विचारों – यूरेशियन एकता पर भी आधारित था। इस प्रकार ऐतिहासिक जडों, आधुनिकीकरण के रास्ते, सामूहिक स्मृति, सामाजिक परंपराओं पर सामाजिक एकीकरण के बौद्धिक स्त्रोत के रुप में विचार विमर्श किया गया। जैसा कि एक आयोजक ने घोषणा की ''हालांकि तुर्की बोलने वाले देशों को हजारों वर्षों तक अलग रखा गया पर आज हम इन देशों के मध्य सांस्कृतिक तथा विद्धानों के सहयोग की बात कर सकते हैं।'' ■

> भारतीय समाजशास्त्र परिषद की हीरक जयन्ती

टी. के. उमन, जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत, भारतीय समाजशास्त्र परिषद के वार्षिक सम्मेलन की आयोजन समिति के अध्यक्ष, एवम् आई.एस.ए. के पूर्व अध्यक्ष, 1990–1994

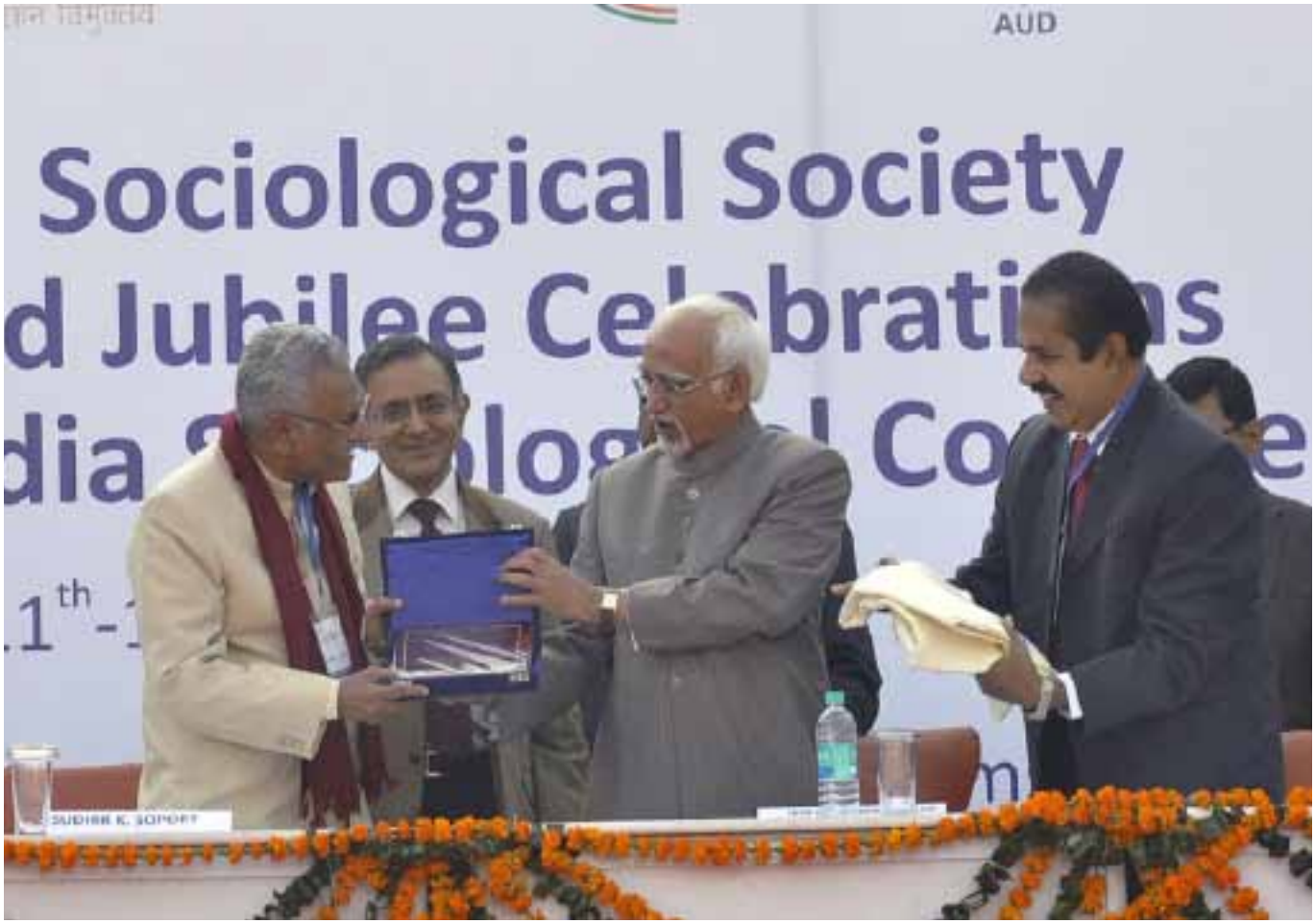

भारत के उपराष्ट्रपति श्री एम. हामिद अंसारी, भारतीय समाजशास्त्र परिषद के पूर्व–अध्यक्ष के रुप में प्रो. टी. के. उमन को सम्मानित करते हुए। उनके मध्य उपकुलपति सुधीर कुमार सोपोरी खडे हैं, तथा आई.एस.एस. के वर्तमान अध्यक्ष जैकब जोन कट्टाकायम दायें से देख रहें हैं।

भारतीय समाजशास्त्र परिषद का हीरक जयन्ती सम्मेलन जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय (JNU), नई दिल्ली, मे 11 से 13 दिसम्बर 2011 तक आयोजित किया गया। इस सम्मेलन की मेजबानी सेन्टर फार स्टडी आफ सोशल सिस्टमस् (CSSS), जे.एन. यू. ने की जो कि देश में समाजशास्त्र का एक प्रख्यात विभाग है। इस सम्मेलन के उर्जावान आयोजन सचिव प्रोफेसर आनन्द कुमार CSSS के प्राध्यापक हैं ।

आई.एस.एस. सम्मेलन जिसका आयोजन अब प्रति वर्ष होता है का एक तीन स्तरीय ढ़ाचा है: प्लेनेरी सत्र (उद्घाटन, समापन और दो स्मृति व्याख्यान), विचार–गोष्ठियां (symposia) जो कि अक्सर समानान्त सत्रों के रुप में होती है, एवं दो दर्जन शोध समितियाँ (RCs) जो अलग से अपनी मीटिंग करती हैं। सम्मेलन के पूर्व एवम् पश्चात के सत्र मुख्य सम्मेलन के शहर के अलावा दूसरे शहरों में आयोजित किये जाते हैं। पिछले कुछ वर्षों से मुख्य सम्मेलन के तुरन्त पहले युवा समाजशास्त्रियों का सम्मेलन भी आयोजित किया जा रहा है। इस वर्ष हीरक जयन्ती आयोजनों के हिस्से के रुप में दो विशेष पूर्व–सम्मेलन बैठकें मुम्बई और लखनऊ में, जहां भारत में सर्वप्रथम समाजशास्त्र में अध्ययन एवं शोध प्रारम्भ हुआ था, आयोजित की गई।

भारत के उपराष्ट्रपति और विद्वान राजनितिज्ञ माननीय हामिद अंसारी नें हीरक जयन्ती समारोह का उद्घाटन किया जिन्होंने समकालीन विश्व के संकटों को पहचानने में समाजशास्त्र की प्रासंगिकता को मान्यता दी एवम् इसी संदर्भ में जन–समाजशास्त्र के महत्व को रेखांकित किया। आई.एस. एस. के वर्तमान अध्यक्ष, जे. जे. कट्टकायम ने अपने सम्बोधन में सम्मेलन के मुख्य विषय 'समाजशास्त्र और भारत में सामाजिक रुपान्तरण' पर बोलते हुए विचार–विमर्श को एक उड़ान दी।

उद्घाटन सत्र नें उत्कृष्ट भारतीय समाजशास्त्रियों को सम्मानित करने की वार्षिक परंपरा की गवाही भी दी। उनमें से तीन – एस. के. श्रीवास्तव (बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय), पी.के.बी. नायर (केरल विश्वविद्यालय) एवं जे.पी.एस. ओबेराय (दिल्ली विश्वविद्यालय) को लाईफटाइम एचीवमेन्ट अवार्ड दिया गया। बुजुर्गों का सम्मान करने की भारतीय परंपरा को निभाते हुए आई.एस.एस. के सभी जिवित पूर्व अध्यक्षों का भी हीरक जयन्ती समारोह के अवसर पर सम्मान किया गया।

पाँच विचार–गोष्ठियों के विषय थे: 'समाजशास्त्र और सामाजिक रुपान्तरण के संकटः एक अन्तरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य', 'शासन के संकट', 'चरमपंथ का संकट', 'विकास का संकट एवं सीमान्तीकरण के मुद्दे', और 'दिल्ली में समाज और समाजशास्त्र'। पहली विचार गोष्ठि अपने स्वरुप से वैश्विक थी जबकि अन्तिम अपनी गंध से स्थानीय, एवम शेष तीन भारत केन्द्रित थीं। इस प्रकार वैश्विक–राष्ट्रीय–स्थानीय सासत्य (continuum)प्राप्त किया गया। मैं इन विचार–गोष्ठियों पर टिप्पणी नही करना चाहता परन्तु पहली विचार–गोष्ठि का संदर्भ देना उचित ही होग क्योंकि मैं यहां पर वैश्विक पाठकों के लिए लिख रहा हूँ। इसमें चार वक्ता यूएसए, स्वीडन, जर्मनी और जापान से लिए गये थे। आई.एस.ए. के अध्यक्ष, माईकल बुरावे (यूएसए) ने प्रमुख भाषण दिया और मैंने गोष्ठि की अध्यक्षता की। प्रोफेसर बुरावे ने सामाजिक आन्दोलनों के द्वारा रुपान्तरण के वर्तमान संकट को समझने के महत्व को रेखांकित करते हुए घोषित किया कि ये लक्षण और समाधान दोनों हैं। मैंनें अपने उद्बोधन को सामाजिक संकट और रुपान्तरण की प्रघटना और समाजशास्त्र विषय के मध्य जटिल तानेबाने पर केन्द्रित किया। अन्य तीन वक्ता अपने सम्बन्धित राष्ट्रों के संदर्भ में बोले।

विकासशील भारतीय समाजशास्त्र के विविध चरित्रों को प्रतिबिम्बित करते हुए दोनों स्मृति व्याख्यानों के विषय थे 'सामाजिक गतिशीलता और सामाजिक संरचना – एक अवधारणात्मक और पद्धतीय पुर्वाभिमुखन की दिशा में' (Social Mobility and Social Structure –Towards a Conceptual and Methodological Reorientation) (एम. एन. श्रीनिवास स्मृति व्याख्यान) जो कि प्रोफेसर पी.एन. मुखर्जी ने दिया और ' 'आदर्श–प्रारुप से रुपक की ओर – क्रान्ति की अवधारणा पर पुर्नविचार' (From Ideal-type to Metaphor – Reconsidering the Concept of Revolution) (राधाकमल मुकर्जी स्मृति व्याख्यान) जो कि प्रोफेसर डी. एन. धनाग्रे ने दिया जो कि दोनों ही आई.एस.एस. के पूर्व अध्यक्ष हैं। प्रोफेसर दीपांकर गुप्ता जो कि तुलनात्मक रुप से युवा समाजशास्त्री हैं ने 'शासन प्रदत्तता – नागरिकता, वृद्धि, और विकास' (Delivering Governance – Citizenship, Growth and Development) पर समापन भाषण दिया ।

बुक ऑफ एबस्ट्रेक्टस में 22 शोध समितियों के सत्रों में पढ़े जाने वाले 775 पर्चों के एबस्ट्रेक्टस शामिल थे। दो शोध समितियों में सबसे अधिक पर्चे प्रस्तुत किये गये – ग्रामीण, किसान तथा जनजातीय समुदायों पर शोध समिति और सामाजिक परिवर्तन एवं विकास पर शोध समिति, जबकि शिक्षा एवंम् समाज पर शोध समिति तथा सिद्धान्त, अवधारणा और पद्धति पर शोध समितियों में प्रस्तुत पर्चों की संख्या सबसे कम थी, ऐसा संभवतः भारतीय समाजशास्त्र में शोध की रुचियों एवंम् ताजा रुझानों की वजह से है।

हीरक जयन्ति के अवसर पर आई. एस.एस. के अधिकारिक जरनल, सोशियोलोजिकल बुलेटिन में दो बड़े शोध पत्र प्रकाशित हुए उनमें से एक आई.एस. एस. के इतिहास पर प्रोफेसर ए.एम. शाह द्वारा तथा दूसरा सोशियोलोजिकल बुलेटिन के 50 वर्षों के विश्लेषण पर आधारित था जो कि इसके वर्तमान व्यवस्थापक सम्पादक प्रोफेसर एन. जयराम द्वारा लिखा गया था। इसके अतिरिक्त सोशियोलोजिकल बुलेटिन में प्रकाशित हुए शोध पत्रों पर आधारित सात पुस्तकें सेज (Sage) पब्लिर्सस् द्वारा प्रकाशित की गयीं जिनमें छः अलग अलग विषयों – भारतीय समाजशास्त्र, बदलती जातियाँ, कृषि क्षेत्र में परिवर्तन, सीमान्त लोगों पर, शिक्षा, सामाजिक आन्दोलनों पर और सातवीं में कुछ चुनिंदा अध्यक्षीय अभिभाषण संकलित थे।

कुल मिला कर आई.एस.एस. का हीरक जयन्ती सम्मेलन एक यादगार घटना थी जिसमे लगभग 1500 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन का यह छोटा सा विवरण अन्य राष्ट्रीय परिषदों के लिए एक उदाहरण बन सकता है जिसके माध्यम से वे अपने को एक तुलनात्मक प्ररिप्रेक्ष्य में स्थापित कर सकते हैं। इससे भी महत्व पूर्ण बात यह है कि यह आयोजन भारतीय समाजशास्त्रियों के लिए एक ऐसी ताकीद है जो उन्हे यह याद दिलाती है कि उन्हे अभी भी मीलों का सफर तय करना है। ■

> ब्रिक (BRIC) देशों में सामाजिक स्तरीकरण

टॉम डायर, कैम्पीनास विश्वविद्यालय, ब्राजील, और आई.एस.ए. कार्यकारिणी के सदस्य, 2010–2014

अपने–अपने देशों में सामाजिक स्तरीकरण पर विचार विमर्श करने के लिए ब्राजील, रुस, भारत तथा चीन के समाजशास्त्री बीजिंग में एकत्रित हुए।

बी.आर.आई.सी. (ब्रिक) के चारों देश ब्राजील, रुस, भारत और चीन, वैश्विक विवर्तनीय बदलाव के क्रम में तेजी के साथ पास आये हैं। इन प्रक्रियाओं एवं आन्तरिक स्तरीकरण के निहितार्थों को भलीभांति समझने के लिए चारों देशों के समाजशास्त्री अक्टूबर 2011 में समाज विज्ञान की चीनी अकादमी (सी.ए.एस.एस.), बीजिंग में एकत्रित हुए और ली पेलिन द्वारा सम्पादित संग्रह Jin Zhuan Guo Jia She Hui Fen Ceng: Bian Qian Yu Bi Jiao (बी.आर.आई.सी. राष्ट्रों में सामाजिक स्तरीकरण) पर विचार विमर्श किया। यह सम्पादिक पुस्तक समाजशास्त्रियों को यह भली प्रकार से समझनें में मदद देगी कि इन चार देशों में ऐसा क्या है जो इन्हे संगठित करता है और इन्हें अलग करता है।

बी.आर.आई.सी. (ब्रिक) राष्ट्रों के मूल प्रतिपादन उन देशों को इंगित करते हैं जहां भूमि का क्षेत्रफल बहुत बड़ा है (3 लाख वर्ग किलोमीटर से ज्यादा), विशाल जनसंख्या है (150 लाख से अधिक व्यक्ति), एवं तुलनात्मक रुप से उच्च वृद्धि दरों वाली विकासशील अर्थव्यवस्थाऐं हैं। इन पर्चों से हमें यह समझनें में मदद मिलती है कि इन कारकों के अनुभविक एवं प्रमाण योग्य परिणाम राजनैतिक और आर्थिक जीवन के लिए और ज्ञान के उत्पादन के लिए भी हैं। चारो देशों में महत्व पूर्ण क्षेत्रीय असमानता भी विद्यमान है। इस प्रकार विकसित राष्ट्रों की तुलना में यहां बड़ी संख्या में जनसंख्या पाई जाती है, शहरी क्षेत्रों के मुकाबले ग्रामीण–शहरी असमानताऐं ज्यादा बड़ी हैं, लोक सेवकों एवं राजनितिज्ञों के पास राष्ट्रीय सम्पदा का असंगत हिस्सा होता है जो कि तेजी से बढते हुए मध्यम वर्ग का हिस्सा बनता है। जब हम पुस्तक के कुछ विशिष्ठ हिस्सों का परीक्षण करते हैं तब कुछ सामान्य गतिशीलता भी दिखाई देती हैं, उदाहरण के लिए, जनसंख्या के बढते हुए प्रतिशत की शिक्षा तक अपनी पहुंच मे समयानुसार सुधार हुआ है, इसके बावजूद महत्वपूर्ण संरचनात्मक असमानताएं विद्यमान हैं और असमानता में उनका योगदान भी। चूंकी इनमें से किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास, आधुनिकीकरण के सिद्धान्त द्वारा प्रस्तावित मार्ग के अनुसार नहीं हुआ है, यह सूचित करता है कि आर्थिक और सामाजिक विकास के सिद्धान्तों में महत्वपूर्ण पाठ और जोड़े जाने हैं।

सेमीनार के दौरान इतनें सारे समान्य बिन्दुओं की पहचान कुछ नियत प्रतिबिम्बों की तरफ इशारा करती है। हमारे अपने सामजिक स्तरीकरण के तन्त्र, और प्रमुख (यूरोपियन एवं उत्तरी अमेरिकी) परम्पराओं में एवं उसके बनाए सिद्धान्त जिनसे कि सामाजिक स्तरीकरण का स्तर पहुचां है, में अन्तर है। उच्च सामाजिक गतिशीलता को देखते हुए और 'पेशा जिन्दगी के लिए है' के विचार की समाप्ति (जैसा कि चीन और रुस में उनकी बाजार की अर्थवयवस्थाओं के संक्रमण के चलते कहा जाता है), हमने स्तरीकरण की परम्परागत धारणा की प्रासंगिकता पर सवाल उठाये। स्तरीकरण के अनुसंधन में राष्ट्रीय स्तर की एजेन्सी के अभाव में हमने देखा कि तदात्मीकरण एवं सामाजिक परिवर्तन की गणना एक मुश्किल कार्य है । ब्रिक राष्ट्रों के मध्य तुलना करने और उसे अधिक सार्थक बनाने के क्रम में हमने पाया कि राष्ट्रीय आंकड़ों की गहरी समझ विकसित करने की आवश्यकता है और यह भी कि किस प्रकार एक ही अवधारणा के भिन्न देशों मे भिन्न अर्थ हो सकते है।

ब्रिक राष्ट्रों के मध्य बड़े अन्तरों को पहचानते हुए हमने पाया कि जैसे जैसे ये देश एक दूसरे को और बेहतर समझते जाऐंगें उसी प्रकार ये अन्तर और भिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक क्रियाओं के प्रतिमान और उनके परिणाम और अधिक स्पष्ट होते चले जायेंगें। अन्तरों को समझना और इसके बावजूद साथ रहनें की क्षमता को विकसित करने में ही इनके सामुहिक भविष्य तथा अपरिहार्य संघर्ष के प्रबन्धन की कुँजी होगी । शायद अन्यत्र से कहीं अधिक, यहां समाजशास्त्रीय और मानवशास्त्रीय अनुसंधानों की भूमिका है। ■